गांधी जन्म-शताब्दी प्रकाशन

मेरा पेट भारत का पेट है

गाधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसग

सम्पादक

विष्णु प्रभाकर

१९६९

गांधी स्मारक निधि

सस्ता साहित्य मंडल

का संयुक्त प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार . १९६९
मूल्य
एक रुपया

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस,
क्वीस रोड, दिल्ली-६

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति

श्री रंगनाथ रामचंद्र दिवाकर की अध्यक्षता में समिति की प्रकाशन सलाहकार समिति के तत्त्वावधान में 'गांधी स्मारक निधि' के द्वारा 'सस्ता साहित्य मंडल' के सहयोग से यह पुस्तकमाला प्रकाशित कराई जा रही है।

१, राजघाट कालोनी,
नई दिल्ली

—देवेन्द्रकुमार गुप्त
संगठन मंत्री
राष्ट्रीय गांधी जन्म शताब्दी
समिति

प्रकाशकीय

महात्मा गाधी के जीवन के लोकोपयोगी प्रसगो की इस पुस्तक-माला की चार पुस्तके पाठको के हाथो मे पहुच चुकी है। पाचवी पहुच रही है। इन तथा आगे की अन्य पुस्तको मे गाधीजी के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर प्रकाश डालनेवाले प्रसग दिये गए है।

इन पुस्तको की सामग्री अनेक पुस्तको मे से चुनकर ली गई है। उन पुस्तको तथा उनके लेखको के नाम प्रत्येक पुस्तक के अन्त मे दे दिये गए हैं। इन प्रसगो की भाषा को अधिकाधिक परिमार्जित कर दिया गया है। यह कार्य श्री विष्णु प्रभाकर ने किया है। वह हिन्दी के जाने-माने कथा-कार तथा नाटककार है। उन्होने हिन्दी की अनेक विधाओ को समृद्ध किया है। इन पुस्तको की भाषा को अपनी कुशल लेखनी से उन्होने न केवल सरस बनाया है, अपितु उसे सुगठित भी कर दिया है। इसके लिए हम उनके आभारी है।

अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी श्री दिवाकरजी ने इस पुस्तक-माला की भूमिका लिख देने की कृपा की, तदर्थ हम उनके अनुग्रहीत हैं।

पुस्तक का मूल्य इतना कम रखने के लिए निधि द्वारा आशिक आर्थिक सहायता दी जा रही है।

हमे पूरा विश्वास है कि इन पुस्तको का सभी वर्गो तथा क्षेत्रो मे हार्दिक स्वागत होगा और इनका देश-व्यापी ही नही, विश्व-व्यापी प्रचार भी।

—मत्री

भूमिका

जो बात उपदेशो के बडे-बडे पोथे नही समझा सकते, वह उन उपदेशो मे से किसी एक को भी जीवन मे उतारने के समझ मे आ जाती है। इसलिए गाधीजी कहते थे कि मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है। उनके जीवन का यह सन्देश उनके दैनन्दिन जीवन की घटनाओ मे प्रदर्शित और प्रकाशित होता है।

ससार के तिमिर का नाश करने के लिए मानव-इतिहास मे जो व्यक्ति प्रकाश-पुज की भाति आते है उनका सारा जीवन ही सत्य और ज्ञान से प्रकाशित रहता है। गाधीजी के जीवन मे यह बात साफ दिखाई देती है। इस पुस्तक-माला मे गाधीजी के जीवन के चुने हुए प्रसगो का सकलन करने का प्रयास किया गया है। उनका प्रकाश काल के साथ मन्द नही पडता। वे क्षण मे चिरन्तन के जीवन के किसी पहलू को प्रदर्शित करते है। उनकी प्रेरणा स्थानीय न होकर विश्वव्यापी है।

ये प्रसग गाधीजी के जीवन से सम्बन्धित प्राय सभी पुस्तको के अध्ययन के बाद तैयार किये गए है। हर प्रसग की प्रामाणिकता की पूरी तरह रक्षा की गई है। फिर भी वे अपने आपमे सम्पूर्ण और मौलिक है।

यह पुस्तक-माला अधिक-से-अधिक हाथो मे पहुचे तथा भारत की सभी भाषाओ मे ही नही, वरन् ससार की अन्य भाषाओ मे भी इसका अनुवाद हो, ऐसी अपेक्षा है। मैं आशा करता हू कि गाधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह पुस्तक-माला अपनी प्रभा से अनगिनत लोगो के जीवन को प्रेरित और प्रकाशित करेगी।

रंगनाथ दिवाकर

विषय-सूची

मेरा पेट
भारत का
पेट है
०

: १ :

मेरा पेट भारत का पेट है

गाधीजी सोदपुर (बगाल) मे ठहरे थे। सभी प्रकार के व्यक्ति उनके दर्शन के लिए आते थे। भेट-पूजा भी करते ही थे। कभी स्वाधीनता-आन्दोलन के लिए, कभी अस्पृश्यता-निवारण के लिए तो कभी खद्दर के प्रचार के लिए। उस दिन कलकत्ते के भागीरथ कानोडिया के कुटुम्ब की कुछ महिलाए उनका दर्शन करने के लिए आई। सबसे पहले उन्होने गाधीजी को प्रणाम किया। फिर जो कुछ रुपये-पैसे ले गई थी, उनके चरणों मे रख दिये। गाधीजी ने उन पर एक दृष्टि डाली और बोले, "बस इतना ही!"

सुपरिचित समाज-सेवी श्री सीताराम सेकसरिया उस समय वही बैठे थे। गाधीजी की बात सुनकर बोले, "बापू, देखिये तो सही, इतने रुपये कम है क्या? आपका पेट तो भरता ही नही।"

रुपये सचमुच काफी थे, लेकिन गाधीजी सहसा गम्भीर हो उठे। बोले, "तुम ठीक कहते हो। मेरा पेट नही भरता, लेकिन तुम्ही बताओ, वह भरे भी कैसे? मेरा पेट तो भारत का पेट है।"

मैं अपना कर्त्तव्य भूलकर यदि .

ट्रासवाल की राजधानी प्रिटोरिया मे सत्याग्रह-सग्राम समाप्त हो चुका था। सरकार के साथ समभौते की बातचीत चल रही थी। पहले दोनो ओर से शर्तों का आदान-प्रदान हुआ। उसके बाद एक कच्चा प्रारूप तैयार किया गया। अब केवल पक्का दस्तावेज बनाना शेष था। इसी बीच फिनिक्स से गाधीजी को एक तार मिला, "कस्तूरबा बहुत बीमार है। उनकी हालत बहुत खराब हो गई है। तुरन्त आइए।"

गाधीजी ने वह तार दीनबधु एड्रयूज को दे दिया। पढकर वह बोले, "हमे इसी वक्त यहा से चल देना चाहिए।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "यह कैसे हो सकता है ? यहा समभौते की बातचीत चल रही है। चौबीस घण्टे के भीतर पत्रो के आदान-प्रदान हो जाने की आशा है। ऐसी हालत मे किसी भी कारण से हो, मुझे यहा से चले जाने का अधिकार नही है। सारी कौम के लिए होने वाले समझौते को एक व्यक्ति के लिए खटाई मे डाल देने का खतरा उठाने के लिए मै तैयार नही। मै अपना कर्तव्य भूलकर यदि एक दिन पहले पहुच जाऊगा तो वह बच जायगी, इसका क्या भरोसा ? जिस काम को हाथ मे लिया है, उसे पूरा करके ही मै यहा से जा सकता हू।"

गाधीजी के इस निश्चय को देखकर एड्रयूज बहुत चिन्तित हुए। उन्होने तुरन्त जनरल स्मट्स से टेलीफोन पर बातचीत

की। कहा, "हम एक धर्म-संकट मे पड गए है। फिनिक्स से तार आया है कि श्रीमती गाधी बहुत बीमार है। गाधीजी को तुरन्त बुलाया है।"

जनरल स्मट्स ने जवाब दिया, "गाधीजी बड़ी खुशी से जा सकते है। हमारा समझौता अब निश्चित है।"

एड्र्यूज ने गाधीजी के सकल्प की चर्चा करते हुए जनरल स्मट्स से कहा, "शाम होनेवाली है, फिर भी मै गांधीजी का पत्र आपके पास ला रहा हू। आप अपना पत्र तैयार करवाकर तुरन्त मुझे दे दे तो अच्छा हो।"

जनरल स्मट्स बोले, "देर तो बहुत हो जायगी। मुझे और भी आवश्यक कार्य करने है, फिर भी आप गाधीजी का पत्र लेकर आइए। मै अपना पत्र तैयार करवाता हू।"

ऐसा ही किया गया। जनरल स्मट्स का पत्र लेकर जब एड्र्यूज वापस लौटे तो रात के दस बज रहे थे। काम निबट जाने के बाद ही गाधीजी फिनिक्स के लिए रवाना हुए।

: ३ :

यरवदा पैक्ट की शर्तें ठीक तरह पूरी हों

गाधीजी दक्षिण भारत के प्रवास पर थे। एक सप्ताह के लिए उन्होने पूर्ण विश्राम लिया। यात्रा स्थगित कर दी गई, लेकिन प्रतिनिधि मण्डलो से मिलने मे कोई बाधा नही थी। हरिजनों के दो प्रतिनिधि मण्डल उनसे मिले। पहला मण्डल पहाडी हरि-

जनो का था। उन्हे इस आन्दोलन से बडा सन्तोष था। सवर्ण हिन्दुओ के विरुद्ध भी उन्हे कोई विशेष शिकायत नही थी, लेकिन अपनी आर्थिक उन्नति के लिए वे अवश्य चिन्तित थे। इसके विपरीत जो दूसरा प्रतिनिधि मण्डल कोयम्बटूर से आया था, उसके पास एक आवेदन-पत्र था। वह सवर्ण हिन्दुओ के विरुद्ध एक अच्छा खासा अभियोग-पत्र था। उन्होने यहा तक कहा, "हमे दुख होता है कि आप जैसे प्रतापी पुरुष का जन्म हमारे आदि हिन्दू कुल मे हमारे कष्टो को अनुभव करने के लिए नही हुआ।"

गाधीजी ने उन्हे सात्वना दी। एक घण्टे तक उनसे बाते करते रहे और जब उन्ही मे से एक सज्जन ने यह याद दिलाया कि हमारा नियत समय हो चुका है तो वह बोले, "जबतक मै अपनी सपूर्ण आत्मा नही उडेल देता, इन भाइयो को लौटा नही सकता। यरवदा पैक्ट की शर्ते ठीक तरह पूरी हो, इसके लिए आप मुझे जामिन समझते है। इसीलिए तो मै यरवदा मन्दिर की वह शान्ति छोडकर सारे भारत का भ्रमण करने के लिए निकला हू।"

इस लम्बी बातचीत के अन्त मे प्रतिनिधिमण्डल की एक वृद्ध महिला ने गाधीजी को दो नारगिया भेट की। बडी प्रसन्नता से उन्होने इस स्नेह-भेट को अगीकार करते हुए कहा, "भाई, इन नारगियो मे तुम्हारा सम्पूर्ण स्नेह और आशीर्वाद भरा हुआ है, फिर भला मै इन्हे क्यो न खाऊगा!"

क्या तू मुझे अच्छी तरह देख सकती है ?

सन् १९३४। उड़ीसा-यात्रा। एक दिन गांधीजी अपने दल के सहित शाम को यात्रा कर रहे थे। सारे रास्ते मे उत्सुक ग्राम-वासी पक्ति बाधकर खड़े थे और उनके आने की राह देख रहे थे। एक स्थान पर तो बडी भारी भीड थी। लोग सारी सडक पर फैल गये थे। उन्हीके बीच एक बुढिया, जिसके सारे बाल सफेद हो गये थे और आखो की ज्योति धुधली पड गई थी, इधर-उधर दौड़ रही थी और कह रही थी, "वे कहा है ? मै उन्हे अवश्य देखूगी।"

वह इतनी उत्तेजित थी कि सम्भवत दर्शन से वचित रह जाती, परन्तु तभी गाधीजी ने उसे देख लिया। वह रुक गये और उसे पुकारा। उत्कण्ठा से भरी हुई वह बुढिया उनके पास आई और अपनी धुधली आखो को उनके ऊपर गड़ा दिया। गाधीजी हँस पडे और बोले, "क्यो ?"

फिर उसकी ठुड्डी पर हाथ लगाते हुए पूछा, "क्या तू मुझे अच्छी तरह देख सकती है ?"

बुढिया के आनन्द की कोई सीमा नही थी। विह्वल होकर उसने अपने दोनो हाथ उनके गले मे डाल दिये और उनकी छाती पर सिर रखकर आनन्द मे आत्मविस्मृत-सी हो गई।

धीरे-धीरे गाधीजी ने अपने को छुडाया और सपने मे खोई

वह बुढिया फिर उस भीड मे समा गई। पर उसके जीर्ण-शीर्ण मुख पर आनन्द का वह प्रकाश अब भी चमक रहा था।

: ५ :

सोने के गहने तुम्हें शोभा नहीं देते

बिहार भूकम्प के समय गाधीजी मुजफ्फरपुर गये थे और वहा के सुप्रसिद्ध राजनेता श्री महेशप्रसाद सिह के घर पर ठहरे थे।

स्नान के अनन्तर भोजन का समय आया। श्री सिह की लडकी सब चीजे ला-लाकर परस रही थी कि गाधीजी बोले, "अपनी माताजी को भेजो।"

बकरी का दूध लेकर श्री सिह की पत्नी आई। हाथो मे सोने की चूडिया और अगूठी, गले मे भी सोने का एक गहना था। दूध लेकर गाधीजी बोले, "ये सोने के गहने तुम्हे शोभा नही देते। तुम बिना गहनो के ही अच्छी लगती हो। ये हमे दे दो। जो लोग कष्ट मे है, उनकी मदद करूगा।"

श्री सिह की पत्नी ने तुरन्त सारे गहने उतारकर उनके सामने रख दिये। गाधीजी बहुत हसे और बोले, "देखो, मैंने तुम्हारा आतिथ्य स्वीकार करके तुमको गहनो से वचित कर दिया है।"

श्री सिह की पत्नी ने कहा, "यह मेरा सौभाग्य है कि आप हमारे घर अतिथि बने। गहने देकर मैं बहुत प्रसन्न हू।"

तीन बजे गाधीजी को स्टेशन जाना था। देखते-देखते अपार भीड वहा इकट्ठी हो गई। स्टेशन तक मनुष्य नजर आते थे। इस अपार भीड मे श्री सिह का परिवार गाधीजी से बिछुड गया। लेकिन वह जैसे ही गाडी मे बैठे उन्होने अपने साथियो से कहा, "अरे, महेशबाबू को तो बुलाओ। मै उनकी पत्नी को धन्यवाद देना चाहता हू। वडे प्रेम से उन्होंने मुझे खिलाया-पिलाया है।"

श्री सिह की लडकी की प्यार से पीठ ठोककर तथा उनकी पत्नी को आशीर्वाद देकर ही वह वहां से गये।

: ६ .

इसी तरह गांवों की सेवा करोगे ?

श्री घनश्यामदास बिडला ने दिल्ली से लगभग पाच मील दूर चर्मालय और हरिजन विद्यार्थियो के एक छात्रालय के लिए जमीन खरीदी थी। वह जमीन उन्होने हरिजन सेवक सघ को दान कर दी थी। वह चाहते थे कि उस जमीन पर सबसे पहले गाधीजी स्वय एक रात रहकर 'शुभ मुहूर्त' करे। गांधीजी ने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। वहा एक झोपडी बनाई गई। उसे देख कर गाधीजी बोले, "यह झोपडी है कि महल ? इसे वनाने के लिए हजारो रुपये खर्च हुए होगे ? तुम यह भूल गये कि तुम हरिजनो के प्रतिनिधि हो। तुमने अपने को विड़ला का प्रतिनिधि मान लिया। कच्ची दीवारो पर घासफूस का छप्पर छाया होता तो गरीबो के झोपडो के साथ इसका ठीक मेल वैठता।"

किसी तरह वह दिन बीता। शाम को सहसा गाधीजी ने देखा कि उनके सामने पीतल की थूकदानी रखी हुई है। गाव के वातावरण मे यह थूकदानी! गाधीजी ने तुरत व्रजकृष्ण चादीवाला से पूछा, "यह थूकदानी किसने मगवाई है?"

व्रजकृष्णजी ने उत्तर दिया, "बापू, मैंने मगवाई है। मेरा विचार था कि मेरे घरपर कोई थूकदानी होगी, वह वहा से ले आयगा अथवा किसी से मांग लायगा, लेकिन खरीदने वाले भाई ने गलती की।"

गाधीजी बोले, "क्या तुमको ऐसा नही लगा कि थूकदानी कही नही मिली तो वह भाई खरीद कर भेजेगा?"

व्रजकृष्णजी ने कहा, "लगा तो था, लेकिन मैं समझता था कि चार-पाच आनेवाली खरीदकर भेजेगा।"

गाधीजी बोले, "चार आने की आती तो तुम्हे कोई ऐतराज नही होता। यही न? इसी तरह गावो की सेवा करोगे? यहा गाव मे मिट्टी का बड़ा शकोरा पैसे दो पैसे का मिल जाता है। वह तो मगवा सकते थे। खैर, यह वापस करो और मिट्टी का बर्तन मगवाओ।"

फिर रात हुई। गाधीजी के सोने के लिए खटिया लाई गई, परतु उन्होने उसपर सोने से इकार कर दिया। बोले, "चटाई पर बिछी हुई गादी ही मेरे लिए काफी होगी।"

यह सुनकर सब लोग घबरा उठे। एक व्यक्ति ने धीरे-से कहा, "बापू गरीब-से-गरीब आदमी भी खटिया तो काम मे लेता ही है।"

गाधीजी बोले, "मै भी जानता हूं, परन्तु क्या हम इसी बात

में गरीव गाव वालो की बरावरी करेगे ? बरावरी करनी है तो भोजन और कपडो मे करो। उनके जैसा खाओ, उनके जैसा पहनो। अगर हम चारपाई छोड सके तो कह सकेंगे कि हमने कुछ तो त्याग किया। वैसा पूरा ग्रामीण वनने में तो अनेक जन्म लगेगे।"

: ७ :

मुझे ही यह करने दो

मैरित्सवर्ग जेल मे अपने शरीर की समस्त मास-मज्जा को दक्षिण अफ्रीका की सरकार के नाम बलि चढाकर जब कस्तूरबा फीनिक्स लौटी तो उन्हे रोग-शैया पर पड़ जाना पडा। धीरे-धीरे वह बीमारी इतनी गम्भीर हो गई कि चारो ओर चिन्ता छा गई। वहा कोई वैद्य-डाक्टर था नही। बा की हालत चिन्ताजनक देखकर किसी तरह डरबन से एक डाक्टर बुलाया गया।

गाधीजी उस समय ट्रासवाल गये हुए थे। वहा से लौटकर उन्होने बा की सेवा का भार स्वय सभाल लिया। इस अवसर पर देश का, सत्याग्रह का, आश्रम का और सरकार के साथ सम-झौते की वातचीत का कोई भी काम वह करते हो, लेकिन बा की सेवा मे कोई त्रुटि नही आने देते थे। वैसे तो श्री छगनलाल गाधी की पत्नी सारा समय बा की चारपाई के पास ही बिताती थी। हरेक छोटा-मोटा काम करने का आग्रह भी रखती थी। परन्तु जब गाधीजी वहा मौजूद रहते, तब उनकी एक न चलने देते थे। उनके हाथ से काम ले लेते थे और कहते थे, "मुझे ही यह

करने दो। बा को सतोष कैसे दिया जाय, इसका पता मुझे ज्यादा है। इस समय तो मैने समय निकाल लिया है, जब मैं न आ सकू तब तुम करना।"

वह दिन भर थूकदान और मलमूत्र के पात्र उठाकर वाहर फेकने ले जाते थे और धोकर वापस लाते थे। अगर कोई उनकी सहायता करने को आगे बढता तो रोक देते थे। पीने के लिए पानी गर्म करना होता या ऐसा ही कोई और काम होता तो भी वह अपने ही हाथो से करते थे। पानी मे जरा-सा कूडा दीख जाय, बर्तनो पर कही कलौस या चिकनाई का अश हो तो वह दुबारा बडी सावधानी से सफाई करते। सारा समय चारपाई के पास खडे रहते। न कुर्सी या स्टूल डालकर बैठते, न उनके मुख पर कभी कोई थकावट या उदासी ही दिखाई देती।

: ८ :

मजाक में भी झूठ का व्यवहार नहीं करना चाहिए

सन् १९२६ मे एक नवयुवक स्नातक साबरमती आश्रम मे रहने के लिए आया था। उसे वच्चो से बहुत प्रेम था। इसलिए शीघ्र ही वह उनमें लोकप्रिय हो गया।

एक दिन वह एक आठ वर्ष की बालिका को खेल-तमाशा दिखा रहा था। उसके हाथ मे एक नीबू था और वह वच्ची उस नीबू को पाना चाहती थी। उछलती-कूदती, हँसकर चीखती,

लेकिन वह उस युवक के हाथ से नीबू ले नही पा रही थी। थक गई तो हारकर रोने लगी। वह नीबू आश्रम के एक मरीज के लिए था। युवक चक्कर मे पड गया। यदि वह नीबू को उसे दे दे तो उस मरीज का क्या होगा?

अचानक उसने नाटकीय ढग से हाथ घुमाया। कहा, "मैने नीबू नदी मे फेक दिया।"

लेकिन वह नीबू उसने चालाकी से अपनी जेब मे रख लिया था। बच्ची ने पूछा, "अब नदी मे उस नीबू का क्या होगा? क्या मै उसे ढूढ सकती हू?"

युवक ने उत्तर दिया, "नही, वह नीबू डूब गया।"

दोनो मे फिर दोस्ती हो गई। साथ-साथ ही वे दोनों रोगी की कुटी तक गये। मार्ग मे उस युवक ने अपनी जेब से रूमाल निकाला तो उसके साथ वह नीबू भी निकलकर नीचे गिर पडा। उसे देखकर बच्ची उसकी ओर झपटी नही, बल्कि क्रोध मे भर-कर उसने युवक की ओर देखा। बोली, "तो तुम मुझसे झूठ बोले थे! जेब मे नीबू छिपाकर मुझसे कहा कि डूब गया। मै बापूजी से कहूगी, तुम झूठे हो।"

और सचमुच उसने गाधीजी से सबकुछ कह दिया। शाम की प्रार्थना के बाद गाधीजी ने उस युवक को बुलाया। युवक ने जो कुछ हुआ था, वह सबकुछ कह सुनाया। गाधीजी समझ गये कि वह महज मजाक था। फिर भी उन्होने कहा, "तुम्हे इस बारे मे सजग रहना चाहिए। बच्चो के साथ कभी मजाक मे भी झूठ का व्यवहार नही करना चाहिए। हँसी-मजाक मे शुरू हुई बात आगे चलकर आदत भी बन सकती है।"

: ९

आनन्द तो मन की वस्तु है

यरवदा जेल मे एक बार केनेडा से मिस गुलचेन लम्स्डेन नाम की एक महिला का पत्र आया। उसने लिखा था, "सर हेनरी लौरेन्स, हमारे यहा आकर रहे थे। उन्होने आपके सबध मे बताया था कि वह आपसे पूना मे मिले थे। आपको एकान्त मे रखा गया था। आपके कमरे के सामने बगीचा था और आप गिबन का 'रोमन साम्राज्य का उदय और पतन' पुस्तक पढ रहे थे। उन्होने यह भी कहा कि आप बहुत आनन्द मे थे। मैने कहा कि यह तो परियो की कहानी-सी लगती है। सर हेनरी बोले, 'तुम लिखकर पुछवालो कि दस वर्ष पुरानी मुलाकात का यह हाल सच है या नही। हा, यदि गाधी की स्मरण-शक्ति मन्द हो गई तो दूसरी बात है, क्योकि उनकी उम्र ६२ वर्ष की हो गई है।' मुझे तो भरोसा है कि आपकी याददाश्त कमजोर नही पडेगी। इसलिए आपसे पूछती हू कि इस मामले मे सर हेनरी लारेन्स की बात कहा तक सच है ?"

गाधीजी ने इस पत्र का उत्तर लिखवाया। महादेव देसाई बोले, "इस पत्र का असर पडता है कि आप इस आदमी की सचाई पर शक करते है।"

गाधीजी बोले, "तो बदल दो, क्योकि हमे ऐसी शका नही है।"

सरदार वल्लभभाई पटेल वही बैठे थे। बोले, "यह आदमी

बहा प्रचार कर रहा होगा। इस औरत को लिखिये कि यहां कोई बगीचा नही, कैदी है। अमुक साल मे मै यहां था तब अमुक पुस्तक पढता था और कात रहा था और स्मरण-शक्ति घटने का डर तो सर हेनरी को हो सकता है, क्योकि उनकी उम्र मुझसे वडी है।"

महादेव देसाई बोले, "ऐसा जवाब तो बर्नाड शॉ दे सकते है। इस जवाब में कुशलता की छाप नही पड़नी चाहिए।"

वल्लभभाई भडक उठे, लेकिन बाद मे गाधीजी ने जो इस पत्र का जो उत्तर लिखवाया वह इस प्रकार था :

"आपके पत्र के लिए धन्यवाद। सर हेनरी सन् १९२२ या २३ मे इस जेल मे आये थे। उस समय की मुलाकात मुझे अच्छी तरह याद है। उनका खयाल सच्चा है कि उस समय मेरा वक्त खासतौर पर गिबन के 'रोमन साम्राज्य का उदय और पतन' पुस्तक के पढने में और चरखा कातने में बीतता था। यह भी सच है कि उन्होने मुझे आनन्द में देखा था। लेकिन उस समय यहाँ सुन्दर बगीचा नही था। आज भी नही है। उस समय यहा कुछ ऊचे-ऊचे पेड जरूर थे और आज भी है और कोठरियां तो जैसी बगैर किसी तरह की सुविधा के हिन्दुस्तान की साधारण जेलो मे होती है, वैसी ही सलाखो वाली है। कोठरियों के तौर पर वे काफी हवा और रोशनी वाली है। आसपास के वर्णन के मामले मे तो मेरी याद मुझे धोखा नही दे सकती, क्योंकि यह लिखते वक्त मै उसी जगह बैठा हूं, जहां मुझे हेनरी लारेन्स ने दस बरस पहले देखा था। इसलिए उनके किये हुए वर्णन पर से आप पर परियो की कहानी का असर पड़ा हो तो जरूर वह वर्णन

गलत है और आनन्द तो मन की वस्तु है। मैं कितने ही वर्षो से कठिन जीवन का आदी हो गया हू। इसलिए आसपास की सुविधा-असुविधाओ का मेरे मन के साथ सबध नही रहता।

: १० :

मुझे यह भाषा बिलकुल पसन्द नहीं

भारतीय स्वाधीनता-सग्राम के इतिहास मे 'यग इण्डिया' का बहुत महत्व रहा। लेकिन गाधीजी के हाथ मे आने से पहले वह 'बाम्बे क्रानिकल' के छापेखाने मे छपता था और उसके घोषित सपादक थे जमनादास द्वारिकादास। वास्तव मे उसके सपादन का भार श्री आर० के० प्रभू पर था। एक दिन वह अपने एक मित्र के साथ गाधीजी से मिलने गये। गाधीजी मणि-भवन बम्बई मे ठहरे थे। अपना परिचय देकर 'यग इण्डिया' के पिछले अक की प्रति उन्होने गाधीजी को दी। गाधीजी ने उसके सम्पादकीय स्तम्भो पर दृष्टि डाली और एक विशेष लेख की ओर इगित करते हुए पूछा, "यह किसने लिखा है ?"

आर० के० प्रभू ने कहा, "यह लेख मैने लिखा है।"

गाधीजी ने फिर दूसरे लेख की ओर इशारा किया, "यह किसनें लिखा है ?"

आर० के० प्रभू के साथ एक साथी थे। उन्होने कहा, "यह लेख मेरा लिखा हुआ है।"

गाधीजी एक क्षण रुके। बोले, "मुझे पहला लेख पसन्द है,

मगर दूसरा बिलकुल नही। पहले में आपने जो कुछ कहा है सो सीधे ढग से कह दिया है, जबकि दूसरे लेख के लेखक ने तरह-तरह के व्यग्यपूर्ण आक्षेपो का आश्रय लिया है। ऐसी बाते कही है जो सचमुच वह नही कहना चाहता।"

आर० के० प्रभू के साथी की ओर मुडकर वह बोले, "आपने लिखा है, "हमे भय है।" मुझे यह भाषा बिलकुल पसन्द नही। यहा आप सचमुच पाठक को यह विश्वास नही कराना चाहते कि आपको भय है। आपका ठीक इससे उलटा अर्थ है। क्या यह बात नही है? गोल-मोल बाते मत कहिए। कठोर बात को नरम शब्दो में कहना या चुटकिया लेना आदि मत कीजिये, बल्कि सीधे साफ ढग से कहिए।"

: ११ :

ये आदमी तो बनें

सन् १९२४ का वर्ष। हिन्दू-मुस्लिम दगो से त्रस्त, गाधीजी दिल्ली मे मौलाना मोहम्मद अली के मकान पर ठहरे हुए थे। तीसरे पहर का समय था। अलीगढ से आये हुए एक भाई ने प० सुन्दरलाल से कहा, "क्या गांधीजी के दर्शन हो सकते है?"

वह उस समय अपने कमरे मे अकेले बैठे हुए थे। दरवाजा बन्द था। प० सुन्दरलाल और उनके साथी ने अन्दर जाने के लिए दरवाजा खोला ही था कि पडितजी की निगाह गाधीजी के चेहरे पर पड़ी। लगा, वह गहरी चिन्ता मे डूबे हुए है। उलटे पाव लौट

पडे। उसी क्षण गाधीजी ने आवाज देकर वापस बुला लिया। दोनो सामने जाकर बैठ गये। देश मे होनेवाले हिन्दू-मुस्लिम दगो के समाचारो से उनकी आत्मा को तीव्र वेदना हो रही थी। उसी प्रश्न को उठाते हुए प० सुन्दरलाल ने कहा, "बापू, क्या आप समझते है कि इस तरह आप हिन्दू और मुसलमानो को एक कर लेगे ?"

गाधीजी ने पूछा, "तुम्हारा क्या मतलब है ?"

पडितजी ने कहा, "क्या हिन्दू हिन्दू और मुसलमान मुसलमान रहकर एक हो सकते है ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मै समझ गया, तुम्हारा क्या मतलब है। तुम जुहू मे भी तो यही कह रहे थे। मुझसे क्या पूछते हो ? मै तो यह कहने को तैयार हू कि वे सब-के-सब नास्तिक हो जाय तो अच्छा है। इनके न मानने से कोई खुदा थोडा ही मिट जायगा, पर ये आदमी तो बने। लेकिन मेरी कौन सुनता है ? कबीर कह गये, नानक कह गये, मेरी कौन सुने ? और तुम क्या चीज हो ? दुनिया तो अपने ही रास्ते पर चलती है।"

यह कहकर गाधीजी मौन हो गये, जैसे फिर गहरी चिन्ता मे डूब गये हो। दोनो बन्धु उठकर बाहर आ गये। मौलाना मोहम्मद अली और हकीम अजमलखा साहब वही थे। पण्डितजी ने उनसे कहा, "ऐसा लगता है जैसे गाधीजी कोई गहरी बात सोच रहे है और कोई खास कदम उठानेवाले है।"

अगले दिन ही गाधीजी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अपने सुप्रसिद्ध २१ दिन के उपवास की घोपणा कर दी।

वह तो आजादी का दीवाना है

१६२८ में कलकत्ता में नेशनल कन्वेशन का अधिवेशन हुआ था। सभापति थे प० मोतीलाल नेहरू। इस कन्वेशन ने जो प्रस्ताव स्वीकार किया था, उसमे भारत का लक्ष्य 'औपनिवेशिक स्वराज्य' निर्धारित किया गया था। जब यह प्रस्ताव काग्रेस महासभा मे स्वीकृति के लिए उपस्थित किया गया तब युवक दल के दो नेताओ की ओर से उस पर सशोधन उपस्थित करने की सूचना मिली। सशोधन था 'काग्रेस का ध्येय भारत की पूर्ण स्वाधीनता है", और ये दो नेता थे पं० जवाहरलाल नेहरू और श्री सुभाषचन्द्र वोस।

महात्माजी काग्रेस से अलग होकर साबरमती आश्रम में विश्राम कर रहे थे, परन्तु सकट के समय उनकी पुकार हमेशा की तरह इस बार भी हुई। वह ठीक समय पर कलकत्ता आ पहुचे। ध्येय सबधी प्रस्ताव उन्होने ही उपस्थित किया। इस पर वोलते हुए उन्होंने प्रारम्भ में औपनिवेशिक स्वराज्य का अर्थ समझाया और उसके गुण वतलाये। अन्त मे सशोवन की चर्चा की। उन्होने सशोधन के सबध मे उतना नही कहा, जितना उसके प्रस्तावक के सबध में। बोले, "जवाहरलाल कहता है, मुझे औपनिवेशिक स्वराज्य पसन्द नही। मै पूरी आजादी चाहता हू। वह चाहेगा भी क्यो नही? वह तो आजादी का दीवाना है। उसके पिता भी तो आजादी के दीवाने है। वह तो अपने

दीवानेपन मे सूख गया है। कमला वीमार है, उसे उसकी चिन्ता नही। अपनी भी परवा नही। देश की चिन्ता मे घुला जाता है। ”

वह यहातक पहुचे थे कि लोगो ने देखा प० जवाहरलाल नेहरू अपने स्थान से उठकर सर झुकाये हुए पण्डाल से वाहर चले गये। अनेक दर्शको ने उस समय कहा, “बुड्ढे ने प्रगसा करके जवाहरलाल को मार डाला।”

उनका कहना ठीक था। सशोधन उपस्थित करने के समय जब जवाहरलालजी की तलाश हुई तो वह वहा नही थे। केवल हरे रग की खादी की टोपी और सफेद कुर्ता-धोती पहने सुभाष-बाबू खडे थे।

१३

मां की ममता बच्चे को स्वावलम्बन नहीं सीखने देती

सौ० शारदादेवी वर्मा महिलाश्रम मे अध्यापिका का काम करती थी। वह अपने लडके के स्वास्थ्य के बारे मे वहुत चिन्तित थी। एक दिन उसे लेकर वह गाधीजी के पास पहुची। उस समय वह कुछ लिख रहे थे। चारो तरफ कागज विखरे हुए थे। कुछ पर गोल पत्थर की बटिया रखी हुई थी। पास ही ताड का एक पखा था।

गाधीजी ने शारदादेवी के लडके की ओर देखा और पखा

उठाने का इशारा किया। लडका गाधीजी का आशय समझ गया। उसने पखा उठाया और गाधीजी को झलने लगा।

कुछ क्षण वीत गये। ठण्डी हवा लगी तो गाधीजी को झपकी-सी आने लगी। वह वैसे ही पीठ के बल गद्दी पर टिक गये। यह देखकर शारदादेवी ने लडके के हाथ से पखा ले लिया और स्वय झलने लगी। दो-तीन मिनट बीते होगे कि गाधीजी जग गये। शारदादेवी की तरफ देखा। मुस्कराए और बोले, "हा, मा है न! मा की ममता ने बेटे को सेवा करने से रोक लिया। छोटा है न। फिर कमजोर है। पखा झलने से थक जायगा।"

शारदादेवी ने उत्तर दिया, "नही वापू, पखा झलते-झलते यह भूल से कही आपको मार न दे, इस डर से मैने इसके हाथ से पखा ले लिया है।"

गाधीजी बोले, "नही, दलील झूठी है। मा की ममता बच्चे को स्वावलम्वन नही सीखने देती।"

: १४ :

सत्याग्रही को ईश्वर पर भरोसा करना चाहिए

नागपुर मे कुछ लोगो ने व्यक्तिगत सत्याग्रह किया था, मगर सरकार ने उन्हे गिरफ्तार नही किया। गाधीजी का आदेश था—'जो सत्याग्रही गिरफ्तार न हो, वे गाव-गांव प्रचार करते हुए दिल्ली की तरफ वढते चले।"

लेकिन नागपुर के ये लोग दिल्ली के स्थान पर पहुच गये सेवाग्राम। वे गाधीजी का आशीर्वाद और दिल्ली जाने का निश्चित आदेश प्राप्त करना चाहते थे।

उस समय गाधीजी स्नान करने के लिए जा रहे थे। जत्थे से उनकी भेट हुई। उन्हे देखकर पूछा, "आप लोग इधर कैसे आये? दिल्ली जाना चाहिए था और वह भी अलग-अलग, गाव-गाव मे प्रचार करते हुए। आप जनसेवा के लिए निकले हैं। इसलिए जनता की सहायता पर निर्भर रहना चाहिए। काग्रेस कमेटी के पास जो पैसा है, वह सत्याग्रहियो के ऊपर खर्च करने के लिए नही है। उन्हे अपने घर का पैसा भी खर्च नही करना चाहिए। गाववालो से जो मिले, उसी पर अपनी गुजर करनी चाहिए।"

उन लोगो ने कहा, "दिल्ली जाने की बात तो हमने सुनी है, पर यहा हम सबकुछ जानने और आपका आशीर्वाद लेने के लिए आये है।"

गाधीजी ने पूछा, "आज के भोजन की व्यवस्था हुई?"

उत्तर मिला, "अभी तो नही हुई, मगर कुछ-न-कुछ हो जायगी।"

गाधीजी बोले, "यहा आप लोगो को भोजन नही मिलेगा।"

यह कहकर वह स्नान करने के लिए चले गये। भोजन का समय हो गया था। इन लोगो को भूख सता रही थी और विदा लेकर वहा से चले जाना चाहते थे, तभी देखते है कि गाधीजी स्नान करके भोजनशाला की ओर जा रहे है। घण्टी बजी, सब आश्रमवासी भोजनशाला की ओर चले। तभी गाधीजी के आदेश

से इन लोगो को बुलाने के लिए एक व्यक्ति वहा आया ।

वे लोग भोजनशाला मे पहुचे । गाधीजी ने बडे प्रेम से उन्हे अपने पास बिठाकर सात्विक भोजन कराया । उबली भाजी, कच्चे टमाटर, मूली, पालक का सलाद, चोकर मिले आटे की छोटी-छोटी रोटिया और गुड ।

भोजन करते समय गांधीजी सच्चे सत्याग्रही के लक्षण बताते रहे । बोले, "आप लोग एक-एक करके गावो मे घूमते हुए दिल्ली जाइए । अपने जीवन को सात्विक बनाइये । गाव वाले आपसे शिक्षा लेगे ।"

उस जत्थे मे कई महिलाए भी थी । उनमें एक थी श्रीमती शान्तिदेवी शर्मा । उन्होने पूछा, "स्त्रियो का अकेला गाव-गाव पैदल घूमना कठिन है । बीमारी मे उनके साथ कोई अवश्य रहना चाहिए ।"

गाधीजी बोले, "सत्याग्रही को ईश्वर पर भरोसा करना चाहिए । वही उसकी मदद करेगे । ईश्वर तुम्हारे हर वक्त साथ है । तुम्हारे सामने एक पवित्र ध्येय है, ऐसा समझ कर चलो । थोडा-थोड़ा चलो और अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखो ।"

: १५ :

तुमने भोजन किया ?

मई, १९४२ में श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री गाधीजी से मिलने के लिए वर्धा पहुचे । उनके पास श्री किशोरलाल मशरूवाला

के नाम बाबा राघवदास का कोई सदेश था।

अग्निहोत्री महादेवभाई की अनुमति लेकर अन्दर गये। प्रणाम किया और बैठ गये। गाधीजी ने तबतक भोजन नही किया था। वह भारत मत्री मि० एमरी के किसी वक्तव्य का उत्तर लिख रहे थे। इतने मे उनकी दृष्टि अग्निहोत्री पर पडी। नाम-ग्राम पूछा। अग्निहोत्री ने मशरूवालाजी के नाम बाबा राघवदास के सन्देश की बात कह सुनाई। मुस्कराकर गाधीजी ने पूछा, "तो आप किशोरलालभाई से मिल लिये ?"

अग्निहोत्री ने उत्तर दिया, "जी नही, मै तो उन्हे जानता नही। आपतक ही यह सन्देश पहुचा दू, यही मुझे अधिक उपयुक्त जान पडा।"

गाधीजी बोले, "अच्छा, अगर मै तुम्हारी मेहनत बचा दू तो ? देखो, इस कमरे मे जो सबसे हट्टे-कट्टे और स्वस्थ व्यक्ति दिखाई दे रहे है, वह किशोरलालभाई है।"

अग्निहोत्री ने किशोरलालभाई को देखा। बाबा राघवदास का सन्देश उनको सुनाया, लेकिन उत्तर दिया गाधीजी ने। फिर बोले, "अब और क्या पूछना है ?"

अग्निहोत्री ने कहा, "आन्दोलन के सम्बन्ध मे जो चर्चा चल रही है वह यदि सत्य है तो सरकार आप और दूसरे नेताओ को बहुत दिन बाहर नही रहने देगी। ऐसी स्थिति मे जन-साधारण की बात तो अलग, स्वय हम लोग क्या करेगे ?"

महादेवभाई ने कहा, 'ऐसी स्थिति आये तो आप 'हरिजन' की फाइलो को उलट-पलटकर देखियेगा। उनसे स्पष्ट निर्देश मिल जायगा।"

चर्चा काफी देर तक होती रही। तभी एक आश्रमवासिनी महिला गांधीजी का भोजन लेकर वहा आई। गांधीजी जैसे चौक पडे। अग्निहोत्री से पूछा, "तुमने भोजन किया?"

अग्निहोत्री ने उत्तर दिया, "नही, बापू मै वर्धा जाकर कर लूगा। स्टेशन के पास एक धर्मशाला मे ठहरा हू।"

यह सुनकर गाधीजी बोले, "तब तो तुम यही खा लो, वर्धा में खाना ठीक नही मिलेगा।"

उन्होने इशारा किया। एक स्वयसेवक तुरन्त अग्निहोत्री को भोजनशाला मे ले गया। वह विलम्व से पहुंचे थे, परन्तु भोजन अभी शेष था। वहां स्वादिष्ट, पौष्टिक और सात्विक भोजन करके वह बहुत प्रसन्न हुए। अधेरा हो चला था। वह वर्धा की ओर लौट पडे। गाधीजो ने पूछा, "कैसे जाओगे? सवारी है?"

अग्निहोत्री ने उत्तर दिया, "नही बापू, मै चला जाऊगा।"

लेकिन गाधीजी की चिन्ता कैसे दूर हो? सड़क पर कीचड़, घना अधेरा, सेवाग्राम मे सवारी की कोई व्यवस्था नही, लेकिन सौभाग्य की वात कि अमृतलाल नानावटी का तागा खडा था। गाधीजी जैसे चिन्तामुक्त हो गये। लेकिन जबतक वे लोग तागे पर वैठ नही गये, तवतक वह भीतर नही गये।

मनुष्य का मूल्य उसकी बनायी संस्था पर से लगाना चाहिए

गाधीजी यरवदा जेल मे थे। करीमनगर की मिस मेरी बार उनसे मिलने के लिए आई। वह देहात मे जाना चाहती थी। इसी सम्बन्ध मे उन्होने शान्तिनिकेतन के बारे मे कोई शका उठायी। गाधीजी ने जवाब दिया, "शान्तिनिकेतन हिन्दुस्तान मे एक अनन्य स्थान है। शायद इस पृथ्वी पर भी वह अनन्य हो। हा, वहा कुछ चीजे ऐसी हैं, जो मुझे पसन्द नही। मगर किसी को देहात का काम देखने की इच्छा हो तो और जगहो के साथ-साथ शातिनिकेतन देखने की मैं उसे खास सलाह देता हू। वहां के लोग ईमानदारी से कोशिश कर रहे है।"

इसके बाद आश्रम मे जाने की सलाह देते हुए बोले, "आश्रम को देखकर मेरी कीमत का अन्दाज लगाना। मुझमें झूठी नम्रता नही। मैं जैसा हू, उससे दूसरा ही चित्र खीचने वाले मित्र भी है। मगर मनुष्य के मूल्य का अन्दाज उसकी बनायी हुई सस्था पर से लगाना चाहिए। जैसे कवि ठाकुर का मूल्य शान्तिनिकेतन पर से लगाया जा सकता है वैसे ही मेरी कीमत आश्रम पर से लगायी जा सकती है। मनुष्य को यह बता देना चाहिए कि उसके इरादे कोई क्षण-क्षण मे आने-जाने वाले विचार नही है, परन्तु स्थायी रूप से अमल मे लाने के होते है। मैं अहिसा के बारे मे जो लिखता हू, उसे अमल मे लाकर

दिखाना है।"

फिर जरायम पेशा लोगों की बात करते हुए कहा, "आश्रम की कमजोरी का यह विचित्र कारण है। इनका धंधा चोरी करना ही है। अब हमें इनके बीच में रहने का निश्चय कर लेना चाहिए। पुलिस से हम शिकायत नहीं कर सकते। बल प्रयोग भी नहीं कर सकते। उनका कोई विशेष विरोध नहीं होता, इसलिए वे ज्यादा ढीठ होते जा रहे हैं। इसका उपाय जरूर है, मगर उस पर अमल करने की हममें शक्ति नहीं है। वह उपाय है कि हम कोई भी माल-असबाब न रखें और जो हो, उसको जो भी ले जाना चाहे, ले जाने दें। अहिंसा का पालन करना है तो इस सवाल का जवाब तुरन्त ढूंढना चाहिए।"

मिस बार बोली, "कोई कठिनाई न हो तब तो इस पृथ्वी पर सत्ययुग आ जाय।"

गांधीजी ने कहा, "यह तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु मरुभूमि में हरियाली हो सकती है और आश्रम वैसा बनने की आशा रख सकता है।"

: १७ :

यह लड़की आश्रम की शोभा बढ़ा रही है

अस्वस्थ चल रही थी। उसने कहा, "दाहिनी बाजू दुखती है। कल तमाम दिन बहुत दुखती रही। थक कर सो गई। शाम को जब दर्द कम हुआ तब खाना खाया।"

गाधीजी ने पूछा, "आज दुखती है?"

उसने उत्तर दिया, "उतनी नही दुखती।"

विनोद करते हुए गाधीजी बोले, "अगर तुझे अपेंडिक्स होगा तो काटना पडेगा। मर जाय तो कुछ चिन्ता नही। नही मरी तो रोग चला जायगा।"

गाधीजी ने तुरन्त काकासाहब कालेलकर से कहा, "इसे आज ही फाटक और गोखले डाक्टर के पास ले जाइये और तुरन्त जाच करवाइये। आपरेशन की सलाह दे तो मेरी तरफ से कहिए कि वे ही कर दे।"

डाक्टर फाटक ने उस लडकी को देखा। कहा, "कुछ दर्द है, मगर कोई खास बात नही।"

लेकिन डा० गोखले ने तुरन्त आपरेशन करने की सलाह दी और वह स्वय ही आपरेशन करने के लिए तैयार हो गये। उन्होने गाधीजी का आपरेशन होते हुए देखा था और वह यह भी जानते थे कि एक पैसा नही मिलेगा। बोले, "मेरा यहा से तबादला हो गया है। कल जाना है, मगर आज इतना काम करके जाऊगा। शाम को ही आपरेशन करूगा।"

काकासाहब गाधीजी के पास आये। उन्होने डाक्टर की सलाह मान ली, लेकिन प्रश्न उठा कि कोई आपत्ति करे या लडकी की बुआ घबराये तो क्या हो? गाधीजी ने उत्तर दिया, "कह देना कि इसका बाप और मा मै हू और मेरी सलाह है कि

आपरेशन करा डाला जाय।"

आपरेशन हुआ और सफल हुआ। लडकी ने बडी हिम्मत दिखाई। रात को पास मे कोई नही था। नर्स तक नही। पानी मागने पर कोई देने वाला नही, पर वह घबराई नही। सवेरे उसने काकासाहब से कहा, "नर्स बेचारी एक होती है और बीमार अनेक। वह कितनो को सभाल सकती है!"

गाधीजी सुनकर बहुत खुश हुए। बोले, "तब तो यह लडकी आश्रम की शोभा बढा रही है।"

: १८ :

जब तुम स्वराज प्राप्त कर लोगी.

सुप्रसिद्ध डाडी-यात्रा पर जाते समय गाधीजी ने जब साबरमती आश्रम छोडा था तब कहा था कि मै अब स्वराज्य लेकर ही इस आश्रम मे आऊगा। लेकिन जून, १९३५ मे जब वह खान अब्दुल गफ्फार खा से मिलने के लिए साबरमती जेल गये तो हरिजन-आश्रम मे हरिजन बालिकाओ को देखने भी गये। बहुत देर तक वह उनसे विनोद करते रहे। अध्यापिकाओ की चर्चा करते हुए उन्होने पूछा, "अमुक अध्यापिका तुम्हे क्या सिखाती है?"

उत्तर मिला, "धुनना।"

इसी प्रकार कोई अध्यापिका कातना सिखाती थी, कोई गाना। लेकिन जब गांधीजी ने एक और अध्यापिका का नाम

लिया, पूछा, "वह तुम्हे क्या सिखाती है," तो उत्तर मिला, "नाश्ता।"

इस पर गाधीजी ने कहा, "तो तुम्हारी सब से अच्छी अध्यापिका 'नाश्ता' का मीठा पाठ देने वाली ही होगी।"

प्रसन्न होकर बच्चिया बोली, "जरूर-जरूर।"

गाधीजी ने कहा, "अच्छा, मुझे अब यह बतलाओ कि तुम लोगो मे नटखट लडकी कौन है?"

तुरन्त ही कई नाम उनके सामने आये। उन्होने फिर पूछा, "तुममे से कोई झूठ भी बोलती है?"

उत्तर मिला, "हा-हा, हम बोलते है, जब काम से जी चुराते है।"

गाधीजी ने कहा, "नाम बताओ।"

एक लडकी ने हँसते हुए उत्तर दिया, "मै हू।"

गाधीजी बोले, "पर यह तो बुरी बात है। है न? तुम्हे ऐसी कोशिश करनी चाहिए, जिससे कभी झूठ न बोलना पडे।"

वह लडकी बोली, "कोशिश तो करती हू, पर मै हमेशा चूक जाती हू। झूठ मुह से निकल ही जाता है। मालूम नही कि मैं अपने प्रयत्न मे कैसे सफल हो सकूगी।"

गाधीजी बोले, "मैं बतलाऊ? अच्छा, तुम नित्य सवेरे उठकर राम का नाम लो और यह कहो, 'हे प्रभु, मेरी सहायता कर कि मै झूठ न बोलू' और नित्य शाम को जब सोने के लिए जाने लगो तब कहो, 'हे प्रभु, सत्य बोलने मे इतनी बार मैने आज भूल की है। मेरी यही प्रार्थना है कि सत्य बोलने मे तू मेरी सहायता कर।' अब तुम मेरे कहे अनुसार चलोगी न?"

सब बालिकाओ ने एक स्वर में कहा, "जी हां।"

गाधीजी बोले, "यह अच्छी बात है। अपने वचन पर दृढ़ रहना। अच्छा, अब हमारा खेल खत्म हुआ, मै विदा लेता हूं। क्यो, जाऊ न अब ?"

कई लडकियो ने कहा, "नही-नही।"

"क्यो, क्या तुम्हे मुझसे कुछ पूछना है ? तो फिर पूछो।"

लडकियो ने पूछा, "आप यह बतलाइये कि आप यहां हमारे साथ क्यो नही ठहरे ?"

गाधीजी बोले, "क्योकि तुमने मुझे निमत्रण नही दिया और बुधभाई ने दिया।"

लडकिया बोली, "निमन्त्रण तो आपको हमारा भी मिलता, पर आप हमारे साथ यहा ठहरेगे नही। बतलाइये, इसका क्या कारण है ?"

गाधीजी बोले, "जब तुम स्वराज्य प्राप्त कर लोगी तब मैं यहा आकर तुम्हारे साथ ठहरूगा।"

: १६ :

इतना करके देखिए तो फर्क पड़ेगा

सन् १६३२ मे गाधीजी यरवदा जेल में थे। तब भी उनके पास नाना प्रकार के अनेक पत्र आया करते थे। रात-रात बैठ-कर वह उनके उत्तर लिखवाते थे। एक दिन एक सरकारी पेशनर का पत्र आया। उम्र उसकी सत्तर वर्ष की हो गई थी। दमे का

रोग उसे बहुत परेशान करता था। उसने लिखा था, "आपने अनेक प्रयोग किये हैं और कुदरती उपायो से रोग अच्छे किये है, तब क्या मुझे कुछ नही बतायगे ?"

महादेव देसाई ने कहा, "ऐसे पत्रो का कहा तक जवाब देते रहे ?"

गाधीजी बोले, "अच्छा।"

यह कहकर उन्होने पत्र फाड डाला, लेकिन तभी सरदार वल्लभभाई पटेल, जो पास ही बैठे थे, बोले, "अरे, लिखो न कि उपवास कर, भाजी खा, काशीफल खा, सोडा पी।"

गाधीजी खिलखिलाकर हँस पडे और महादेवभाई से बोले, "महादेव, यह कागज उठा लो। हमे उसे जवाब देना है।"

और सचमुच उन्होने उस पत्र का उत्तर लिखवाया। उसका सार था, "आपको डा० मुन्थू को लिखना चाहिए। हमारा अशास्त्रीय किन्तु अनुभव का ज्ञान तो यह बताता है कि आपको तीन उपवास करने चाहिए और फिर दूध और नारगी के रस के साथ उपवास छोडना चाहिए। इतना करके देखिए तो फर्क पडेगा।"

उसके बाद वह अपने दक्षिण अफ्रीका के अनुभव सुनाने लगे कि किस प्रकार इन्होने कुदरती इलाज से अनेक व्यक्तियो का दमा दूर किया था।

वीड़ी न पीने में ही तुम्हारा भला है

धार्मिक, आर्थिक और आरोग्य की दृष्टि से आहार में सुधार और प्रयोग करने का गाधीजी को बडा शौक रहा है। इन प्रयोगो के साथ दवाओ की मदद के बिना कुदरती उपचार से रोगियो को रोग-मुक्त करने के प्रयोग भी वह करते रहते थे। जिन दिनो वह दक्षिण अफ्रीका मे वकालत करते थे, उन दिनो मुवक्किलों के साथ उनका परिवार जैसा सबध था। सुख-दु ख मे वे सब उन्हें अपना साझीदार बनाते थे। जो उनके आरोग्य विषयक प्रयोगों से परिचित थे वे इस विषय में भी मदद लेते थे। कभी-कभी ऐसे लोग टाल्स्टाय फार्म पर भी आ धमकते थे। इनमे से एक था लुटावन नाम का एक बूढा, जो उत्तर हिन्दुस्तान से गिरमिटिया मजदूर वनकर दक्षिण अफ्रीका गया था। उसकी उम्र सत्तर वर्ष से ऊपर रही होगी। वरसो से दमा और खासी का रोगी था। वैद्यो और डाक्टरो का उसे काफी अनुभव हो चुका था। गांधीजी ने उससे कहा, "अगर तुम मेरी सारी शर्तो का पालन करके फार्म पर रहने को तैयार हो तो मै तुमपर अपने प्रयोग आजमाऊगा।"

उस बूडे ने गाधीजी की सारी शर्ते कबूल की। उसे तम्बाकू का बडा व्यसन था। उसने उसे भी छोडना स्वीकार कर लिया।

अब गांधीजी के उपचार शुरू हुए। उपवास, कटि-स्नान,

धूप मे बैठना, आदि-आदि। खुराक मे उसे थोडा भात, थोडा-सा जैतून का तेल, शहद, कभी-कभी खीर, मीठी नारगी या अगूर और भुने हुए गेहू की कॉफी दी जाती थी। नमक और मसाले बिलकुल बन्द कर दिये थे।

जिस मकान मे गाधीजी सोते थे उसीके अन्दर के हिस्से मे लुटावन का बिस्तर था। प्रयोग करते हुए एक सप्ताह बीत गया। उसके शरीर मे तेज आया। दमा कम हुआ। खासी भी कम हुई, लेकिन रात के समय ये दोनो रोग उसे बहुत परेशान करते थे। गाधीजी को सन्देह हुआ कि कही यह छिपाकर तम्बाकू तो नही पीता। उससे पूछा तो उसने इकार कर दिया।

एक-दो दिन और बीत गये, परन्तु उसे कोई लाभ नही हुआ। तब गाधीजी ने गुप्त रूप से जाच करने का निश्चय किया। उनके पास टार्च थी। एक रात वह जागते पडे रहे। बरामदे मे उनका बिस्तर था और भीतर लुटावन का। आधी रात को उसे खासी आयी। उसने दियासलाई जलाकर बीडी पीना शुरू किया। गाधीजी तो देख ही रहे थे। वह धीरे-से उसके बिस्तर के पास गये और टार्च का बटन दबा दिया। लुटावन एकाएक घबरा गया। उसने बीडी बुझा दी और गाधीजी के पैर पकडकर बोला, "मैने बडा गुनाह किया है। अब मै कभी तम्बाकू नही पीऊगा। आपको मैने धोखा दिया है। आप मुझे माफ कर दीजिये।"

कहते-कहते उसका गला भर आया। गाधीजी ने उसे सांत्वना दी। बोले, "बीडी न पीने मे ही तुम्हारा भला है। मेरे हिसाब से तो तुम्हारी खासी मिट जानी चाहिए थी, लेकिन जब नही मिटी तो मुझे शका हुई कि तुम छिपे-छिपे बीडी पीते होगे।"

उसके वाद लुटावन ने बीडी पीनी छोड दी। उसके साथ ही उसका रोग भी कम होने लगा। एक महीने के भीतर दोनो ही रोग दूर हो गये। तेजस्वी और ताकतवर होकर ही उसने गाधीजी से विदा ली।

: २१ :

मैं धरती-पुत्र हूं

सन् १९२७ मे सेठ जमनालाल वजाज सावरमती आये थे। उन्होने देखा कि गाधीजी को जितनी शान्ति और आराम की आवश्यकता है, उतना मिलता नही है। इसलिए वह शान्ति के साथ अपना काम कर सके और समय-असमय पर मिलने आनेवाले दर्शको के उपद्रव से बचे रहे, इस विचार से आश्रम के अहाते मे ही उन्होने उनके लिए एक छोटा-सा एकतल्ला मकान बनाने की इच्छा प्रकट की। गाधीजी ने इसके लिए उन्हे अपनी स्वीकृति दे दी। और लोगो ने भी इस योजना का स्वागत किया, किन्तु दूसरे ही दिन शाम की प्रार्थना के बाद गांधीजी ने घोपित किया कि उक्त योजना के लिए असावधानी-वश अपनी सम्मति प्रदान करने के क्षण से वह बेचैनी अनुभव कर रहे है। वह बोले, "मै तो धरती पर का जीव हू। धरती-पुत्र हूं। इसके अतिरिक्त एक किसान और जुलाहे के लिए या एक लोकसेवक के लिए भी एक तल्ले पर जाकर रहना और इस प्रकार धरती-माता से अपना नाता तोड़ लेना नितान्त अशोभनीय है। इसलिए

मैंने अपना पूर्वोक्त निर्णय वदल दिया है। मै आश्रम के उस छोटे-से कमरे से, जिसका मैं आजतक उपयोग करता रहा हू, सतुष्ट हू।"

और वह मकान नही वना।

: २२ :

जो मैं कहता हूं, वह करो

नोआखाली-प्रवास मे एक गाव से दूसरे गाव घूमते-घूमते गाधीजी देवीपुर पहुचे। वहा के लोगो ने वडे ठाठ-वाट से उनका स्वागत किया। इसमे उनके लगभग डेढ-सौ, दो-सौ रुपये खर्च हो गये। प्रतिदिन गाधीजी जिस गाव मे जाते थे उस गाव की स्त्रिया तिलक करके उनका स्वागत करती थी। वहुत हुआ तो नारियल के पत्तो से कुछ सजावट भी कर ली जाती थी। इसमे गाधीजी को कोई ऐतराज नही होता था, क्योकि इसमे पैसे खर्च नही होते थे, केवल मेहनत ही करनी पडती थी। लेकिन यहा देवीपुर मे लोगो ने विशेप रूप से चादपुर से फूल, जरी, रेशम की पट्टिया, रग-विरगे कागज आदि मगवाये और गाव को सजाया। घी और तेल के दीये जलाकर दीप-माला भी की।

यह सब देखकर गाधीजी सहसा गम्भीर हो गये। फिर मनु से कहा, "पता लगाओ, यहा के कार्यकर्ता कौन है और आवादी कितनी है?"

मनु ने पता लगाया कि गाव मे तीन-सौ हिन्दू और डेढ-सौ

मुसलमान रहते है। हिन्दुओ मे ब्राह्मण, कायस्थ और शूद्र सभी है।

गाधीजी ने वहा के कार्यकर्ता को बुलाया और पूछा, "इस सजावट के लिए पैसा कहा से मिला ?"

कार्यकर्ता ने उत्तर दिया, "आपके चरण हमारी भूमि पर कहा बार-बार पडते है ? इसलिए प्रत्येक हिन्दू ने आठ-आठ आने पैसे दिये है। जो दे सकता था, उसने अधिक भी दिये है। इस तरह लगभग तीन-सौ रुपये हमने इकट्ठे किये और ये सब चीजे खरीदी।"

यह सुनकर गाधीजी को बहुत दु ख हुआ। दर्द-भरे स्वर मे वह बोले, "यह सजावट जो तुमने की है, वह क्षण-भर मे कुम्हला जायगी। मुझे लगता है, तुम सब मुझे धोखा दे रहे हो। मेरे नाम पर यह ठाठ-बाट करके तुम इस झगडे को और बढावा दे रहे हो। क्या तुम नही जानते कि मै इस समय आग की लपलपाती हुई ज्वालाओ से घिरा हुआ हू। जितने फूलों के हार आप लोगो ने पहनाए है उनके बजाय यदि सूत के हार मुझे पहनाते तो रज न होता, क्योकि उनसे सजावट भी होती है और बाद मे कपड़े भी बन सकते है।

"अगर तुम्हे मुझसे प्रेम है तो मै जो कहता हू, वह करो। लेकिन यह मेरी समझ मे नही आता कि ऐसे कत्ले आम के बाद इतना व्यर्थ खर्च करने का खयाल तुम्हे कैसे आया ! तुम कांग्रेस के नामी कार्यकर्ता हो। कहते हो, तुमने मेरी किताबे पढी है। एम० ए० तक पढाई की है। जेल भी हो आये हो। खादी की छोटी-सी धोती पहनते हो, फिर इस सजावट में विलायती मिलों

का रेशम और रिवन कैसे लगाया ? तुमसे मुझे अपने सव कार्यकर्ताओ का अन्दाज होता है। जो कार्यकर्ता एक दिन जनता के सेवक थे, उन्हे यदि पदो पर बिठायगे तो ये फूल हार पहनने-पहनाने के लालच मे कही गिरने न लगे। मैं आज छाती ठोककर नही कह सकता कि कोई भी मेरे किसी भी कार्यकर्ता की परीक्षा ले सकता है, वह सादा-का-सादा ही मिलेगा। अच्छी वात है, आज की इस कहानी से मेरी आखे खुल गई। मै आप लोगो को दोष नही देता। आप तो जैसे थे वैसे ही दिखाई दिये, लेकिन इससे ईश्वर मुझे इस वात का भान कराता है कि मै कहा हू।"

बेचारे कार्यकर्ता को क्या पता था कि गाधीजी को इतना दुख होगा। उन्होने तुरन्त सब सजावट उतार दी। जो वस्तुए काम मे ली जा सकती थी, काम मे ले ली गई। गाधीजी के आदेशानुसार हार मे इस्तेमाल किये गए तागो का बडल वना लिया गया। वह बडल काफी बडा था। उसे लोगो को सीने के काम मे लेने के लिए दे दिया। उसके बाद सभी लोग हाथ कते सूत के हारो से ही गाधीजी का स्वागत करते थे। लगभग पाच थानो जितना सूत इकट्ठा हुआ। उसका कपडा वनवाकर गरीबो मे बटवा दिया गया।

अब श्रद्धापूर्वक किसके साथ परामर्श करूंगा

३१ जुलाई १९२० की वह भयानक रात अभी समाप्त भी नही हुई थी कि स्वराज्य मत्र के जन्म-दाता लोकमान्य बाल गगाधर तिलक का स्वर्गवास हो गया। गाधीजी तब बम्बई मे ही थे। फोन पर यह दुखद समाचार पाकर वह बहुत गम्भीर हो उठे। सारी रात बिस्तर पर बैठे रहे। दीया भी वैसे ही जलता रहा उसी की ओर ताकते हुए वह सोचते रहे। बहुत रात गये महादेवभाई की आख खुली। उन्होने देखा कि गाधीजी वैसे ही बैठे हुए है। वह उनके पास गये। उन्हे देखते ही गाधीजी बोल उठे, "अब अगर मै किसी उलझन में पडूगा तो श्रद्धापूर्वक किसके साथ परामर्श करूगा? और जब कभी सारे महाराष्ट्र की मदद की जरूरत आ पडेगी तो किससे कहूगा?"

एक क्षण वह रुके, फिर बोले, "आजतक मे स्वराज्य का कार्य करता रहा। लेकिन स्वराज्य का नाम जहां तक हो सका, टालता रहा। लेकिन अब तो लोकमान्य का चलाया हुआ स्वराज्य का अखड जाप आगे चलाना होगा। इस बहादुर वीर के हाथ की स्वराज्य की ध्वजा एक क्षण के लिए भी नीचे नही झुकनी चाहिए।"

दूसरे दिन वह लोकमान्य की अन्तिम यात्रा मे शामिल हुए। अर्थी को कन्धा दिया, लेकिन ऐसे गम्भीर प्रसगो पर शान्ति

और गाम्भीर्य का जैसा वायुमण्डल रहना चाहिए वैसा न देखकर उनके मन को बडा आघात पहुचा। वह दु:खी हुए। लेकिन बाद मे इसी बात को उन्होने एक नयी दृष्टि से देखा। अहमदाबाद लौटकर प्रार्थना के बाद उन्होने इस प्रसग की चर्चा की और कहा, "जो जनता वहा इकट्ठी हुई थी वह शोक करने के लिए थोडे ही आयी थी। वह तो अपने राष्ट्र-नेता का सम्मान करने आई थी। ऐसी जनता से हम शोक के गाम्भीर्य की अपेक्षा ही क्यो करे।"

: २४ :

जुलाब की जरूरत नहीं

पडित तोताराम सनाढ्य गाधीजी के पास साबरमती आश्रम मे रहते थे। उनकी पत्नी श्रीमती गगाबहन भी उनके साथ ही थी। एक बार वह बीमार हो गई। जैसाकि सदा होता था, गाधीजी ही उनकी देखभाल करते थे।

उस दिन सोमवार था। गाधीजी मौन-व्रत धारण किये हुए थे। वह गगाबहन को देखने के लिए गये, लेकिन शायद तभी कोई आवश्यक कार्य आ गया और वह चिकित्सा सम्बन्धी सूचनाये बिना दिये ही वापस लौट आये।

रात को लगभग दो बजे उनकी नीद खुली। याद आया कि आज गगाबहन को चिकित्सा-सम्बन्धी सूचना तो दे ही नही सके। बस उसी वक्त उन्होने एक छोटी-सी पुर्जी पर पेंसिल से

लिखा—"जुलाब की जरूरत नही है। आज भी दूध देना चाहता हू। नारगी और दाक्ष का रस लेती रहना। पानी पी सके, इतना पीवे। कटि-स्नान लेवे और बर्फ की मालिश भी करे। नमक और सोडे का पानी भी लेवे। और पेट पर आज भी दिन में मिट्टी की पुलटिस लगावे। अभी चार ग्रेन कुनैन, नीबू और सोडे के साथ लेवे। दो बजकर पाच मिनट।"

उस पुर्जी को उन्होने आश्रम की एक बहन के हाथ उसी समय पडित तोताराम सनाढ्य के पास भिजवा दिया।

: २५ :

मैं रामजी का नाम रटते-रटते मरूं

दिल्ली की अमानुषिक घटनाओ की बाते सुन-सुनकर गाधी-जी का मन अत्यन्त बेचैन हो उठता। जिनको वह अपने स्नेही-जन और अपना साथी मानते थे उनके व्यवहार से भी उन्हे थोडा असतोष था। पाकिस्तान से लाखो की सख्या में भारत आये हुए निराश्रितो की विकट समस्या उन्हे परेशान कर रही थी। २९ जनवरी (१९४८) को रात को वह थककर चूर हो गये। मनु उनके सिर मे तेल की मालिश कर रही थी। मालिश कराते-कराते वह कहने लगे, "मेरे सिर मे चक्कर आ रहे है। मै सोच रहा हू कि मै कहा खडा हू, क्या कर रहा हू! आज की इस अशाति में शान्ति की स्थापना कैसे की जा सकती है?"

इसके बाद खिन्न स्वर मे वह भजन की यह कड़ी बोल

उठे—"है वहारे वाग दुनिया चन्द रोज।"

उस समय कौन जानता था कि चन्द रोज की यह वात अव केवल चन्द घटो की ही रह गयी है? थोडी ही देर वाद उनके सबसे छोटे पुत्र देवदास गाधी वहा आये। कुछ देर दोनो वाते करते रहे। बाते करते-करते उन्हे जोर की खासी आ गई। मनु ने उनसे पेनीसिलिन की गोली लेने का आग्रह किया, परन्तु वह क्यो मानने लगे! राम नाम मे उनकी अटल श्रद्धा थी। अत्यन्त गम्भीर और करुण स्वर मे वोले, "इस यज्ञ मे इन सव लोगो के बीच अकेली तू ही मेरे साथ भाग ले रही है। आजतक मैने ऐसी शिक्षा किसी दूसरे को नही दी जैसे तेरी मा वनकर तुझे दी है। अगर मै किसी रोग से मरू, एक छोटी-सी फुसी की वजह से भी मरू तो तू दुनिया से पुकार-पुकारकर कहना कि मै दभी और ढोगी महात्मा था। भले ही ऐसी वाते कहने के कारण लोग तुझे गाली दे या मार भी डाले। मै जहा भी रहूगा, वहा मेरी आत्मा को शाति मिलेगी। एक हफ्ते पहले जैसे मुझ पर वम फेककर मारने का प्रयत्न किया गया, उसी तरह कोई आदमी मुझे गोली से मारने आये और उस समय अगर मै बहादुरी से गोलिया छाती पर झेल लू और मेरे मुह से आह तक न निकले, वल्कि रामजी का नाम रटते-रटते मरू तो ही तू दुनिया से कहना कि मै सच्चा महात्मा था।"

क्यों, कैसी है कल्पना ?

एक बार हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की बैठक गाधीजी की कुटिया मे हो रही थी। वहा मेज-कुसिया नही थी। मिट्टी से लिपी हुई स्वच्छ धरती पर चटाई बिछाकर सब लोग बैठे थे।

बैठक के बीच में ही गाधीजी अपने स्थान से उठे। उन्होने एक कुर्सी मगवायी। स्वय जाकर एक छोटी-सी तिपाई उठा लाये और उस पर उन्होने मिट्टी का एक शकोरा लाकर रखा। सब लोग अचरज से यह दृश्य देख रहे थे। कोई इसका अर्थ नही जानता था। एक व्यक्ति ने उनसे पूछा, "बापूजी, आप यह क्या कर रहे है ?"

गांधीजी हस पड़े। बोले, "मौलाना साहब आनेवाले है न ! उन्हे धरती पर बैठने की आदत नही। उनके लिए ही यह प्रबन्ध कर रहा हू।"

उस व्यक्ति ने फिर पूछा, "लेकिन यह मिट्टी का शकोरा किसलिए है ?"

गाधीजी ने अपनी मुक्त हँसी बखेरते हुए उत्तर दिया, "ओह ! इसके बारे मे पूछते है ! यह है राखदानी ! क्यो, कैसी है कल्पना !"

: २७ :

क्यो, तुम्हारी आंखें खराब तो नही हैं ?

एक वार आश्रम के विद्यालय के विद्यार्थियो ने गाधीजी को व्यायाम, खेल और अभिनय दिखाने का निश्चय किया। मार्तण्ड उपाध्याय ने वास के सहारे ऊची कूद का खेल दिखाया। अपनी उम्र के लडको मे पोल जम्प मे उसका दूसरा या तीसरा नम्वर रहा करता था, लेकिन गाधीजी के सामने जव खेल का प्रदर्शन हुआ तो तीन वार अवसर दिये जाने पर भी जितनी ऊचाई से वह कूद जाया करता था उस दिन उतनी ऊचाई पर से नही कूद सका। या तो डोरी के इधर ही कूदता या फिर डोरी पाव मे उलझ जाती। जव खेल का प्रदर्शन समाप्त हुआ तब गाधीजी ने बालक मार्तण्ड को वुलाकर पूछा, "क्यो, तुम्हारी आखे खराव तो नही है ?"

मार्तण्ड ने उत्तर दिया, "लगता तो नही है, पर इस वार खेल मे डोरी साफ दिखाई नही देती थी। इसी कारण मै सफल नही हो सका। यह सब शायद धूप के कारण हुआ।"

गाधीजी वोले, "नही, कल जाकर अपनी आखो की जाच कराओ। मै जमनालालजी से कह दूगा। वह सव व्यवस्था करा देगे।"

दूसरे दिन जमनालालजी ने मार्तण्ड को अहमदाबाद के एक आंख के डाक्टर के पास भेज दिया। पहली ही जाच मे पता लगा कि आखो मे दोप है। दोनो का नम्वर—२ निकला।

डाक्टर ने चश्मा बनाया और आदेश दिया कि उसे हमेशा लगाना चाहिए। बापू को जब इन बातो का पता लगा तो वह बोले, "जब तुम बास लेकर डोरी लाघने का प्रयास करते थे तो तुम मिच-मिची आखो से देखते थे। फिर भी डोरी के या तो पहले कूदते थे या डोरी के ऊपर। इससे मुझे लगा कि तुम्हारी आख खराब होनी चाहिए।"

. २८ .

दो हजार वर्ष की अवधि आपको अधिक मालूम होती है ?

गोलमेज परिषद् के समाप्त हो जाने के बाद गाधीजी सुप्रसिद्ध फ्रासीसी मनीषी रोम्या रोला से मिलने के लिए पेरिस होते हुए स्विटजरलैण्ड पहुचे। वह एक सप्ताह तक उनके वीलन्यव के पास के घर पर रहे। इसी अवधि मे लोजान और जेनेवा मे उनके व्याख्यानो का भी आयोजन किया गया। किसी एक भापण के पश्चात एक वृद्ध सज्जन ने उनसे पूछा, "क्या उग्र उद्देश्य को दोहराते समय, जोकि आज से दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीह ससार को दे गये थे और जिसकी असफलता की साक्षी इतिहास दे रहा है, आप निराशा अनुभव नही करते ?"

अपनी स्वाभाविक मुस्कराहट के साथ गाधीजी ने प्रतिप्रश्न किया, "कितने वर्ष बोले आप ?"

वह वृद्ध सज्जन साम्यवादी थे। उत्तर दिया, "मैने कहा

कि विगत वीस शताब्दियो से व्यर्थ ही इन वातो का प्रचार किया जा रहा है।"

गाधीजी सहज भाव से वोले, "तो क्या बुराई का वदला भलाई से चुकाने जैसी दुरूह वात सीखने के लिए, दो हजार वर्ष की अवधि आपको वहुत अधिक मालूम होती है ?"

: २९ .

मेरा आपरेशन करती तो .

जिस समय गाधीजी आगाखॉ महल मे नजरवन्द थे, कुछ कैदी उनके पास काम करने के लिए रहते थे। ऐसे ही एक कैदी की आख के पास एक फोडा था। आख सूज कर वन्द हो गई थी। उसमे चीरा लगाने का निश्चय किया गया। प्यारेलाल को भय था कि चीरे के नाम से वह डर जायगा। शायद बेहोश भी हो जाय। इसलिए उन्होने कहा, "इसे लिटा कर चीरा लगाना चाहिए।"

गाधीजी वोले, "नही, ये लोग तो बहादुर होते है। तुम्हे जैसी सुविधा हो वैसे ही करो।"

डा० सुशीला नैयर ने उसे बिठा कर ही चीरा लगाया। गॉधीजी वडी दिलचस्पी के साथ सारा समय उसके पास ही खडे रहे और जो मदद दे सकते थे देते रहे। जब पट्टी वाधने का अवसर आया तो पाया कि पट्टी कुछ छोटी है। उसके साथ दूसरी पट्टी जोडनी पडी। यह सब देखकर गाधीजी वोले, "मेरा आपरेशन

करती तो तू कभी छोटी पट्टी लेकर काम शुरू न करती। पहले से ही पट्टी बडी रखनी चाहिए थी।"

: ३० :

उनका नंगा रहना क्या नग्न सत्य को प्रकट नहीं करता ?

सन् १९२१ में गाधीजी और मौलाना मोहम्मद अली दक्षिण की यात्रा कर रहे थे। जब वे वाल्टेर पहुचे तो भारत सरकार ने मौलाना मोहम्मद अली को गिरफ्तार कर लिया। बेगम मोहम्मद अली भी उस यात्रा में उनके साथ थी। उन्होने बडे साहस के साथ इस विछोह को सहा और मद्रास में होने वाली सभाओ में वह गाधीजी के साथ जाती रही। गाधीजी इस बात से वहुत प्रभावित हुए।

इसके वाद उन्हे मद्रास में छोड़कर ही वह मदुरा चले गये। उनके डिब्बे में और भी बहुत से यात्री थे, लेकिन उनमें से लग-भग सभी उन दिनों होने वाली इन घटनाओं से परिचित नही थे। वास्तव में उन्हे इन वातो की तनिक भी चिन्ता नही थी। उन सभी ने विदेशी वस्त्र पहने हुए थे। गाधीजी ने उनमें से कुछ के साथ वातचीत करने का प्रयत्न किया और आग्रह किया कि वे खादी पहने। उन्होंने सिर हिलाते हुए उत्तर दिया, "हम इतने गरीव है कि खादी नही खरीद सकते। वह वहुत महगी है।"

गांधीजी उनकी बात का अर्थ समझ गये। उनके मन मे गहन मन्थन मचने लगा। सोचने लगे—"मैं कुर्ता, टोपी और पूरी धोती पहने हुए हू। जबकि करोडो लोग चार इंच चौडी और चार फुट लम्बी लगोटी के सिवा और कुछ नही पहन सकते। मजबूर होकर उन्हे नंगे रहना पड़ता है। उसका यह नगा रहना क्या नग्न सत्य को प्रकट नही करता ? अब यदि मैं सभ्यता की सीमा मे रहते हुए अपने पहनावे मे जितना कपडा कम कर सकता हू उतना न करू तो मैं इन लोगो को प्रभावशाली उत्तर कैसे दे सकता हू ?"

बस मदुरा की सभा के बाद उन्होने यह निश्चय कर लिया कि वह अब लगोटी ही पहना करेगे।

: ३१ :

आज तो तुम लोगो की शादी का दिन है

सेठ जमनालाल बजाज की पुत्री मदालसा का विवाह श्रीमन्नारायण के साथ वर्धा शहर मे 'बच्छराज भवन' के सामने सम्पन्न हुआ था। गांधीजी का आशीर्वाद तो प्राप्त हो ही चुका था। उस दिन खूब बारिश हो रही थी। लेकिन गाधी-जी कस्तूरबा सहित ठीक समय पर विवाह-मण्डप मे पहुच गये थे। विवाह-सस्कार आश्रमपद्धति के अनुसार लगभग एक घण्टे मे समाप्त हो गया। इस अवधि मे गांधीजी बराबर चरखा कातते रहे। सस्कार समाप्त होने पर जब वर-वधू उन्हे प्रणाम करने

गये तो उन्होने अपने हाथ से काते हुए सूत की मालाएं उनको पहनाईं। उसी दिन शाम को उन्होने उन दोनो को भोजन के लिए सेवाग्राम आने का निमन्त्रण दिया।

सध्या के समय वर-वधू जमनालालजी की 'ऑक्स-फोर्ड' गाडी में वैठकर सेवाग्राम की ओर रवाना हुए। यह थी तो वैलगाडी ही, लेकिन एक पुरानी फोर्ड गाडी के आधे हिस्से से यह वनाई गई थी। इसलिए इसका नाम हुआ था 'ऑक्सफोर्ड'। 'ओक्स' अर्थात् बैल से चलने वाली फोर्ड।

वर्षा तब भी हुए जा रही थी। मार्ग कच्चा था। चारो ओर कीचड-ही-कीचड। किसी तरह से वे लोग आश्रम पहुचे। गाँधीजी उनकी राह देख रहे थे। ठीक समय पर सब आश्रम-वासियो के साथ वे लोग भी भोजन करने के लिए बैठे। गाधीजी स्वय अपने हाथ से थाली परोसकर प्रत्येक व्यक्ति को देते थे। वर-वधू की थालिया भी उन्होने बड़े स्नेह के साथ लगाईं। भोजन हुआ। नियम था कि सब लोग अपनी-अपनी थाली माज-धोकर वापस चौके में रखेंगे, परन्तु जब वर और वधू ऐसा करने लगे तो गाधीजी ने मुस्कराकर कहा, "अरे, आज तो तुम लोगो की शादी का दिन है। आज तुम्हे थाली नही उठानी है। तुम उठो और हाथ धोलो।"

मेरी नहीं, शंकरलाल की दवा करो

गाधीजी के प्रयोगो का कोई अन्त नही था। उन दिनो बादाम और नारियल का दूध लेने का प्रयोग चल रहा था। खुराक भी कम लेते थे। इसी कारण वजन घट गया था और शरीर भी दुबला होता जा रहा था। लेकिन परिश्रम उसी प्रकार चल रहा था। गुजरात विद्यापीठ की पुनर्रचना की धुन लग रही थी।

इसी समय आश्रम के विद्यार्थियो ने विद्यामन्दिर के वार्षिकोत्सव का आयोजन किया। उन्होने एक नाटक भी प्रस्तुत किया। गाधीजी चर्खा कातते-कातते उस नाटक को देख रहे थे कि उनके साथियो ने अनुभव किया कि महात्माजी आज विशेप रूप से उदास है। उन्होने उन्हे हसाने का प्रयत्न किया, लेकिन सफल नही हो सके।

थोडी देर बाद उन्होने चर्खा कातना बन्द कर दिया। एक विद्यार्थी तार लपेटने लगा, तभी एकाएक श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने देखा कि महात्माजी मीराबहन के कन्धे का सहारा लेकर उठ रहे है। शायद कमजोरी के कारण ही ऐसा हुआ हो कि उसी क्षण उनके पैर लटक गये। शरीर का सारा बोझ मीराबहन पर आ गया। जमनालालजी तुरन्त बोले, "इन्हे फिट आगया है, हरिभाऊ, तुम इनके पैर सभाल लो।"

फिर तो वातावरण पलक मारते जितने समय मे कुछ-का-

कुछ हो गया। नाटक बद हो गया। महात्माजी का शरीर पीला पड़ गया। आखे खिच आई। गर्दन लटक गई। लगा, जैसे ब्रह्माण्ड द्रुत गति से घूम रहा हो। अभी दो दिन पहले महात्मा-जी ने प्रार्थना के समय प्रवचन करते हुए कहा था, "मरना तो ऐसा कि चर्खा कात रहे है, कातते-कातते दम निकल गया। बात कर रहे हैं कि बोलते-बोलते सास छूट गई।"

वह एक अद्‌भुत दृश्य था। शोक और करुणा से अभिभूत सब लोग तरह-तरह के उपचार कर रहे थे। रुलाई रोकने मे उन्हे बड़ी कठिनाई हो रही थी, लेकिन मुश्किल से तीन मिनट भी नही बीते होगे कि महात्माजी ने आखे खोली और रगमच की ओर देखा। धीरे-धीरे बोले, "खेल क्यो बन्द कर दिया? उसे जारी करो।"

खेल शुरू हो गया। लोगो के प्राण मानो फिर लौट आए। पाच-सात मिनट और बीत गये। महात्माजी ने पूछा, "मेरा सूत कितना हुआ है, गिना? कितना कम है?"

एक भाई ने कहा, "सोलह तार कम है।"

गाधीजी बोले, "मेरा चर्खा लाओ। शेष तार कातने हैं।"

सुनकर सभी व्यक्ति व्यग्र हो उठे। हे राम, यह कैसा बेपीर आदमी है! प्राण अभी पूरी तरह शरीर में लौटे नही है कि चर्खा कातने का आग्रह कर रहा है! जमनालालजी ने सुझाया, "बापूजी, अब आप न काते तो ठीक है।"

तुम तो ऐसा न कहते।"

शकरलालभाई तो बहुत ही परेशान हो उठे। इस समय चर्खा कातने का आग्रह करना उन्हे दुराग्रह जैसा लगा, मानो गाधीजी मौत को जानबूझकर बुलाना चाहते हो, लेकिन गाधीजी तो गाधीजी थे। चर्खा ग्राया और वह कातने बैठ गये। तभी आ पहुचा डाक्टर। देखकर बोला, "यह तो भले-चगे है। इन्हे क्या देखू ?"

गाधीजी से हसकर कहा, "मेरी नही, शकरलाल की दवा करो।"

उसी समय मच पर नाटक का पात्र कह रहा था, "देखो, अभी दो घडी के बाद मेरी मृत्यु होने वाली है, इसलिए धर्म के बारे मे जो कुछ पूछना हो, पूछ लो।"

: ३३ ·

अपनापन खोकर मैं हिन्दुस्तान के काम का न रहूंगा

आगाखा महल मे वन्दी-जीवन विताते हुए गाधीजी को एक वर्ष हो चुका था। देश की स्थिति को लेकर सरकार से उनका पत्र-व्यवहार बराबर चल रहा था। सरकार उन्हे जेल मे रखने के लिए कटिबद्ध जान पडती थी, जिससे उनकी अनुपस्थिति मे हिन्दुस्तान के सबध मे अपनी गन्दी चालबाजी को अमल मे ला सके। लेकिन भारत के नेता उन्हे बाहर देखने के

लिए उत्सुक थे। श्रीनिवास शास्त्री गाधीजी से मतभेद रखते थे, लेकिन उनके सबध बहुत ही मधुर थे। वह नही चाहते थे कि गाधीजी जेल मे रहे। उन्होने उनकी मुक्ति के लिए एक खुली चिट्ठी लिखी। सवेरे घूमते समय एक दिन प्यारेलाल ने गाधीजी से पूछा, 'आपको श्रीनिवास शास्त्री की खुली चिट्ठी कैसी लगी ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "भाषा तो अच्छी है मगर और कुछ नही है।"

प्यारेलाल ने कहा, "उनका तो यही कहना है न कि किसी भी प्रकार आप बाहर निकल आवे।"

गाधीजी बोले, "वह इतनी बात नही समझते कि 'किसी भी' तरह बाहर आकर मै कुछ भी काम नही कर सकता।"

प्यारेलाल ने कहा, "शास्त्रीजी के पत्र का उत्तर लिखू ?"

गाधीजी बोले, "उत्तर तो एक मिनट मे लिखा जा सकता है। वह इतना ही है, "आप क्यो नही समझते कि अपनापन खोकर मै हिन्दुस्तान के काम का न रहूगा।"

: ३४ :

क्या वह मेरी शिकायत करती है ?

नमक-सत्याग्रह आरम्भ करने से पहले, सदा की भाति, गाधीजी ने सारे देश का दौरा किया। उस यात्रा मे वह भी आए और श्रीप्रकाशजी के पास ठहरे। जब वहा से ज

तो सभी कुटुम्वीजन उन्हे विदा देने के लिए एकत्र हुए। उनमें श्रीप्रकाशजी की माताजी भी थी। अचानक वह वोली, "महात्माजी, आप वा के साथ वहुत वुरा वर्ताव करते है।"

कुछ दिन पूर्व कस्तूरवा की एक साधारण-सी गलती को लेकर गाधीजी ने एक वहुत ही मार्मिक लेख लिखा था, "मेरा दुख मेरी शर्म।" इस लेख मे उन्होने कस्तूरवा की कडे शव्दो मे निन्दा की थी। उन्हे कोई व्यक्ति चार रुपये भेट मे दे गया था और वह उन रुपयो को ठीक समय पर आश्रम के कोष मे जमा नही करा सकी थी। इस लेख को पढकर अनेक व्यक्तियो को वेदना हुई थी। इसी वेदना के कारण श्रीप्रकाशजी की माताजी ने महात्माजी से उपर्युक्त शव्द कहे। लेकिन गाधीजी ठहरे शकर महादेव। हॅसकर वोले, "वा को मैं खिलाता हू, पहनाता हू, उसकी फिकर करता हू, क्या वह मेरी शिकायत करती है?"

माताजी ने कहा, "मै कुछ रुपया बा को देना चाहती हू, वह नही ले रही है। लेने की अनुमति दे दीजिए।"

महात्माजी ने इस वात को स्वीकार नही किया। बोले, "न-न, रुपया वा को नही, श्रीप्रकाश को दीजिये, क्योकि वह मेरे लिए कोप एकत्र करने मे परेशान है। उस रुपये को उसी मे डाल देगे।"

अन्त मे माताजी ने जो सोने की गिन्नी बा के लिए निकाली थी, वह महात्माजी के कोप मे जमा करदी गई।

: ३५ :

अब तो सेल्फ ठीक हो गया न ?

न जाने कितनी बार गाधीजी ने सारे भारत का भ्रमण किया था। उस बार हरिजन कोष के लिए रुपया इकट्ठा करते हुए वह देहरादून आ रहे थे। वहा ब्रह्मचारी नाम के एक ड्राइवर थे। एक पुरानी-सी टैक्सी चलाते थे। वह महावीर त्यागी से बोले, "महात्मा गाधी को मेरी गाडी मे बिठाया जाय।"

लेकिन त्यागीजी ने इस बात को स्वीकार नही किया। बस ब्रह्मचारी ने सीधे महात्माजी को लिख दिया। वह कभी आश्रम में रह चुके थे। तुरन्त उत्तर आया कि वह उन्हीकी गाडी मे बैठेगे।

गाधीजी को लेने के लिए झुण्ड-के-झुण्ड लोग स्टेशन पहुचने लगे। सिगनल नीचा हो गया। गाडी ने प्लेटफार्म में प्रवेश किया और वह रुकी कि ब्रह्मचारीजी की फोर्ड 'पो' पो' करती हुई ठीक महात्माजी की खिडकी के सामने आ लगी। खद्दर से मडित वह गाडी रुई के गालो से ढकी हुई थी, मानो बर्फ पड रहा हो।

जलूस नगर की ओर चला। त्यागीजी ने न जाने किस-किस से क्या-क्या वादे कर लिये थे। पहले कुलियों ने इक्यावन रुपये की थैली भेट की। फिर तागेवालो ने एक सौ एक रुपये की थैली दी। गाधीजी बहुत खुश थे। बोले, "इन सबको उन पन्द्रह सौ रुपयो में शामिल नही किया जायगा, जिनको देने का तुमने वादा किया है, क्योकि अभी देहरादन नही आया है। यह तो

ईस्ट इण्डिया रेलवे है।"

इसी तरह हँसते-हँसाते, थैलिया स्वीकार करते, नगर की ओर चल पडे। खुली हुई मोटर, दोनो ओर जनता की अपार भीड। बाजार के एक लाला मित्रसेन ने पाच सौ रुपये की थैली इस शर्त पर देनी स्वीकार की दी कि गाधीजी की मोटर दो मिनट के लिए उनकी दुकान के सामने रुक जाय।

उत्तर प्रदेश की यात्रा के लिए आचार्य कृपालानी व्यवस्था करते थे। उन्होने यह शर्त स्वीकार नही की।

महात्माजी ने यह सुना तो हँस पडे। परन्तु गाडी जैसे ही दुकान के सामने आई, रुक गई। गाधीजी ने पूछा, "क्या हुआ?"

ब्रह्मचारी बोले, "कुछ नही, जरा पेट्रोल बन्द हो गया।" यह कहकर वह नीचे उतरे और खटर-पटर करने लगे। तबतक लाला मित्रसेन आटे के दीये जलाते रहे। गाधीजी ने कहा, "अरे, सेल्फ से चलाओ न?"

ब्रह्मचारी बोले, "जी, सेल्फ भी खराब हो रहा है।"

यह देखकर कृपालानीजी के क्रोध का पार न रहा, लेकिन तबतक लालाजी के दिये जल चुके थे। वह थाल लिये हुए बाहर निकले और गाधीजी की सेवा मे पाच सौ रुपये पेश कर दिये। गाधीजी ने मुस्कराकर ब्रह्मचारी से कहा, "अब तो सेल्फ ठीक हो गया न?"

ब्रह्मचारी इसी क्षण की राह देख रहे थे। उन्होने तुरन्त मोटर चला दी। बा और बापू दोनो ठहाका मारकर हँस पडे। कृपालानीजी को भी मजा आ गया। हँसी दबाकर बोले, "क्या करे, यू० पी० के गुडो के बीच फस गये है।"

यदि गंगोत्री मैली हो जाय तो...

अग्रवाल-पचायत ने जमनालालजी वजाज को जाति वहिष्कृत कर रखा था। वह अस्पृश्यो के हाथ का खाते थे, यही उनका सबसे वडा गुनाह था। फिर भी एक ऐसा दल था, जो उन्हे छोडना नही चाहता था। उसी दल के कुछ वृद्ध लोग एक दिन उनसे मिलने आए। वोले, "आप कुछ भी करे किन्तु अस्पृश्यो के हाथ का न खावे। हमारे सतोष के लिए ही सही। क्या आप हमे इतना विश्वास नही दिला सकते कि भविष्य मे आप अछूतो के हाथ का पकाया नही खायगे ?"

जमनालालजी ने उत्तर दिया, "आश्रम मे तो सभी जाति के लोग रहते है। क्या मै आश्रम मे खाने से इकार करू ?"

वृद्ध सज्जन वोले, "आश्रम के लिए कौन कहता है, वह तो पुण्य भूमि है। तीर्थस्थान के लिए कोई रुकावट नही। अन्य स्थानो पर आप ऐसा न करे, यही हमारी माग है।"

परन्तु यह माग भी जमनालालजी कैसे स्वीकार कर सकते थे ? इसलिए अत मे वह शिष्टमण्डल गांधीजी के पास पहुचा। उन्होने पूछा, "जमनालालजी अस्पृश्यो के हाथ का खाते हैं। इसमे आपको किसका डर है ? समाज का या धर्म का ?"

एक वृद्ध ने कहा, "धर्म तो हम क्या समझे, समाज की रुढि है कि ऐसा नही करना चाहिए। हम जमनालालजी की सब वाते मानते हैं। ये हमारी इतनी-सी वात क्यों नही मानते ?"

गाधीजी बोले, "यदि रूढि अच्छी नही है तो उसका नाश ही कर देना चाहिए। मै तो यह जानता हू, जो शराबी नही है, व्यभिचारी नही है, उसके द्वारा स्वच्छता से पकाया हुआ, खाने योग्य पदार्थ हमे अवश्य खाना चाहिए। जो अपवित्र रहते है, मुर्दे का मास खाते है, शराबी है, उनके हाथ का खाने को तो मै नही कहता। आपमे यदि साहस न हो तो आप चाहे ऐसा न करे, लेकिन आप इनको क्यो पीछे हटाना चाहते है? आप चाहे तो इनसे यह प्रतिज्ञा करा ले कि जो शौचादि को न माने, उस ब्राह्मण या अब्राह्मण किसी के भी हाथ का ये न खाय। आप तो पचो के त्रास से भयभीत है, लेकिन यदि गगोत्री मैली हो जाय तो फिर क्या गगा का पानी स्वच्छ रह सकता है? आज के पच पच कहा रह गये है? वर्तमान के पच तो राक्षसी प्रथा के पुजारी है। पाखण्ड, स्वार्थ, क्रोध और द्वेष से भरे हुए है। मेरी यह भविष्यवाणी है कि अगर हम पचो का अन्याय नही मिटा सकते तो समाज का नाश हो जायगा। धर्म की बडी-बडी बाते बनाने से न्याय नही हो सकता। पच गगोत्री मैली हो गई है। इसे शुद्ध करने के लिए हरेक को मर मिटना चाहिए। जमनालालजी ऐसा ही कर रहे है। उन्हे आप आशीर्वाद दे। आप जमनालालजी को छोड दे, किन्तु उनके लिए प्रेम कायम रखे और पचायत के जो लोग विरोधी है, उनका भी विरोध न करे। वे क्रोध के पात्र नही है, दया के पात्र है। हम क्रोध को अक्रोध से और अशान्ति को शान्ति से ही जीत सकते है। इसलिए आप उनसे भी प्रेम करे और जमनालालजी को आशीर्वाद दे कि वह धर्म की रक्षा और अन्याय का सामना करने मे कृतकार्य हो।"

इतना कहकर गांधीजी चुप हो गये। सभा मे जैसे सन्नाटा छा गया हो। किसी से उत्तर देते नही बन पडा। चुपके से एक वृद्ध सज्जन ने पगडी उतारकर गाधीजी के पैरो में रख दी। कहने लगे, "महाराज, आपने जो कहा, उसे सुनकर तो मैं गद्‌गद्‌ हो गया।"

: ३७ :

जो श्रद्धा की खोज करता है उसे वह जरूर मिलती है

गांधीजी उन दिनो बगाल की यात्रा पर थे। मार्ग में हर स्टेशन पर हजारो लोग उनके दर्शनो के लिए इकट्ठे हो जाते थे और उनके हरिजन कोप में मुक्त मन से दान देते थे। एक स्टेशन पर एक महिला भीड को चीरती हुई तेजी से उनके डिब्बे के पास पहुची। वह सोने-चादी के आभूषणो से लदी हुई थी। पास आकर उसने अपने सब आभूपण उतारे और गाधीजी के चरणो मे रख दिये। बोली, "महात्माजी, मुझे श्रद्धा दीजिये।"

महात्माजी ने उत्तर दिया, "यह काम तो ईश्वर ही कर सकता है। जो श्रद्धा की खोज करता है, उसे वह जरूर मिलती है।"

मेरा टिकट तुम ले लो

जिराल्डा फॉरविस गाधीजी से पहले कभी नही मिली थी। जब वह पहली वार इगलैड से वम्वई पहुची, तब उन्हे यह नही मालूम था कि उन्हे दूसरी ही गाडी से लाहौर चले जाना है। वह स्टेशन पहुची, लेकिन मार्ग मे उन्हे कुछ देर लग गई। गाडी चलने की तैयारी मे थी। उसमे स्त्रियो का दूसरे दर्जे का एक ही डिब्बा था और वह पूरी तरह भरा हुआ था। स्थान की तलाश मे वह प्लेटफार्म पर इधर-उधर भागने लगी, लेकिन कही जगह नही थी। सहसा उनकी दृष्टि एक खाली डिब्बे पर गई। वह पहले दर्जे का डिब्बा था। उन्होने निश्चय किया कि वह अधिक किराया देकर उसी मे यात्रा करेगी और वह सूचना देने के लिए गार्ड को ढूढने लगी। जल्दी मे वह यह देखना भूल गई कि वह डिब्बा सुरक्षित था।

उसके द्वार पर कुछ व्यक्ति खडे हुए बाते कर रहे थे कि उनमे से एक व्यक्ति ने उन्हे रोककर पूछा, "क्या मैं आपकी कोई मदद कर सकता हू ?"

उस व्यक्ति का कद छोटा, चेहरा सरल और मुख दन्तहीन था। हॅसने पर उनकी हॅसी भयानक लगती थी। तभी गाडी ने चेतावनी की सीटी दी। वह व्यक्ति सहसा मुडा और उसने अधिकार-पूर्वक सकेत किया। गार्ड ने, जो झडी दिखाने ही वाला था, वदले मे अपनी सीटी वजाई। तवतक यह परेशान वहन

अपनी बात कह चुकी थी। दूसरे सज्जन कुछ परेशान दिखाई दे रहे थे, लेकिन उस व्यक्ति ने अपनी धोती की तह टटोल कर एक टिकट निकाला और उस महिला को देते हुए कहा, "यह मेरा टिकट तुम ले लो और अपना मुझे दे दो।"

दूसरे व्यक्तियो ने तुरन्त इस बात का विरोध किया, लेकिन उसने सबको चुप करा दिया, तबतक आसपास और भी व्यक्ति घिर आये। गाडी क्यो रुक गई है, यह देखने के लिए स्टेशन-मास्टर भी दौड कर आया, लेकिन उस व्यक्ति ने उसी शान्त भाव से कुली से कहा, "इन महिला का सामान अन्दर रख दो और मेरा बाहर निकाल दो।"

फिर वह उस महिला की ओर मुडा और बोला, "बात यह है कि मैं पहले दर्जे में सफर नही करना चाहता। मेरे मित्रो ने मुझे सूचना दिये बिना मेरे लिए स्थान सुरक्षित करवा दिया। मै भी लाहौर ही जा रहा हू। इसलिए आपसे जगह बदलने मे मुझे खुशी होगी।"

विस्मित-चकित वह महिला इतनी अभिभूत हो गई कि विरोध न कर सकी और उन्होने वह परिवर्तन स्वीकार कर लिया। अपने मित्रो के विरोध की तनिक भी चिन्ता किये बिना वह बिना दात वाला व्यक्ति हँसता हुआ गाडी के पिछले हिस्से की ओर चल दिया और एक तीसरे दर्जे में बैठ गया।

वह व्यक्ति और कोई नही स्वयं महात्मा गाधी ही थे।

: ३९ .

आखिर मुझे एक रास्ता सूझ गया

गाधीजी किसी भी चीज को व्यर्थ नही जाने देते थे। पुराने लिफाफो तक का उपयोग करते थे। चिट्ठियो का भी जो भाग कोरा रह जाता था, उसको फाड लेते थे। अखवार और पार्सल आदि जिन कागजो मे लिपटे रहते थे, उनका भी वह उपयोग करते थे। उन पर वह अपने विचार लिखते या हिसाब लिखते। दुर्भाग्य से ऐसे बहुत से पत्र खो गये है, लेकिन जो बच गये हैं उनसे पता लगा सकता है कि वह सम्पादन, छपाई तथा ऐसे दूसरे अनेक कामो के बारे मै किस तरह की विस्तृत सूचनाए दिया करते थे। ऐसे रद्दी कागज उनके मौन-दिवस पर बहुत काम आते थे।

एक दिन दोपहर के समय कृष्णदास उनके कमरे में आए तो पाया कि गाधीजी बहुत प्रसन्न है। वह बोले, "कृष्णदास, मेरे पास प्रतिदिन बहुत से तार आते है। मै नही जानता था कि उनका क्या किया जाय ! इसलिए फाड देता था। इससे मुझे बडा दुख होता था। सोचता था कि क्या इनका कोई उपयोग नही हो सकता ! आखिर मुझे एक रास्ता सूझ ही गया।"

यह कह कर उन्होने तार का एक फार्म उठाया और बताया कि किस प्रकार उसका लिफाफा बनाया जा सकता है। फिर उन्होने आदेश दिया कि भविष्य मे इसी प्रकार लिफाफे तैयार किये जाय।

कृष्णदास ऐसा ही करते थे। गाधीजी को उन लिफाफों का उपयोग करते हुए इतनी प्रसन्नता होती थी कि वह सुन्दर कागज के नये लिफाफे छूते तक नही थे।

. ४०

बोलने का अधिकार केवल मुझको है

जब बिहार के तत्कालीन गवर्नर ने चम्पारन के सम्बध में गाधीजी को मिलने के लिए बुलाया तब सभी को यह डर लगा कि कही गाधीजी गिरफ्तार न कर लिये जाय।

उन दिनो गवर्नर राँची में रहते थे। जाते समय गांधीजी ने अपने साथियो से कहा, "यदि मै गिरफ्तार भी कर लिया जाऊं तो अमुक-अमुक तरीके से काम करते रहना।"

दस वजे गाधीजी गवर्नर से मिलने के लिए अकेले ही रवाना हुए। सोचा, एक-डेढ घटे बात होगी, परन्तु वार्ता पाच-छ. घटे तक चलती रही। उनके साथी तार की राह देखते रहे। पूरा दिन बीत गया, कोई समाचार नही मिला। उन्हे लगा, गाधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया है, लेकिन दूसरे दिन तार आ पहुचा—"कल गवर्नर से बहुत-सी बाते हुई। आज भी होगी।"

अन्त मे गांधीजी ने अपने तर्कों से गवर्नर को यह समझा दिया कि चम्पारन का यह मामला जांच करने योग्य है। गवर्नर ने तुरन्त एक जाच कमेटी नियुक्त की और गाधीजी से कहा, "आप भी इसमे रहे।"

गाधीजी सहसा तैयार नही हुए, परन्तु गवर्नर ने उनसे कहा, "आप कमेटी मे रहेगे तभी हम आपको वता सकेगे कि इन सौ वर्षो मे सरकार के अफसरो ने हिन्दुस्तानी भाइयो के साथ कैसा वर्ताव किया है। आप नही रहेगे तो रिपोर्ट आपको नही दिखाई जा सकेगी।"

गाधीजी तुरन्त सहमत हो गये, लेकिन अपने सभी साथियो से उन्होने कहा, "तुम लोगो मे से कोई भी जाच की हुई वातो के विषय मे न तो भाषण देगा और न समाचारपत्रो मे ही लिखेगा। इस सवध मे वोलने का अधिकार केवल मुझको है।"

इस जाच कमेटी ने सरकार को जो रिपोर्ट दी उसके परिणामस्वरूप निलहो की वे कोठिया उजड गई, लेकिन उनके इस व्यवहार के कारण निलहे गोरे वरावर गाधीजी के मित्र वने रहे।

: ४१ :

यदि मेरे संदेश में सत्य है तो

गाधीजी साधारणत. सभी लोगो का विश्वास करते थे, परन्तु जहा तक विचारो का सवध था, वह वडे तर्कपरायण थे। वह छोटी-छोटी वातो पर भी अड जाते और अगर कोई अपना विचार मनवाने के लिए जोर लगाता तो वह और भी दृढ हो जाते थे। नमक-सत्याग्रह के समय जव उन्होने अपनी सुप्रसिद्ध डाडी यात्रा आरम्भ की तव वहुत से साथियो ने सोचा कि

महात्माजी का अन्तिम सन्देश रिकार्ड करवा कर देश भर मे प्रचारित किया जाय।

इस सबध मे गाधीजी से प्रार्थना करने के लिए एक शिष्ट-मडल उनके पास गया। डा० राजेन्द्रप्रसाद भी उस शिष्टमडल के एक सदस्य थे। उन्होने अपना प्रस्ताव गाधीजी के सामने रखा, परन्तु गाधीजी ने उसे दृढ स्वर मे अस्वीकार कर दिया।

उन लोगो ने फिर भी आग्रह किया, करते ही रहे। तव गाधीजी बोले, "मुझे अपनी आवाज मे अपना सन्देश रिकार्ड करवा कर नही फैलाना है। यदि मेरे सन्देश मे सत्य है तो वह बिना रिकार्ड के ही घर-घर पहुच जायगा और अगर उसमे सत्य नही है तो उसका प्रचार करना बेकार है।"

४२ .

मै जैसा हूं, वैसा हूं

कई कारणो से महाराष्ट्र प्रदेश में गाधीजी के अनेक विरोधी मित्र पैदा हो गए थे। जरा-जरा-सी बातो मे वे गाधीजी के महा-राष्ट्र-द्वेष का दर्शन करते और फिर वढा-चढा कर उसका वर्णन करते। मध्यप्रान्त के तत्कालीन काग्रेसी मन्त्रिमण्डल से डा० खरे को हटना पडा था। इसके पीछे भी उन्हे महाराष्ट्र-द्वेष की गध आई। अपनी शिष्या महाराष्ट्र की कुमारी प्रेमावहन कण्टक को गाधीजी ने जो पत्र लिखे, उनमे उन्होने अपना दिल खोल कर रख दिया था। स्त्री-पुरुषो के वैवाहिक जीवन के वारे मे अपने

अनुभव की कुछ बाते निस्सकोच भाव से लिखी थी। इन पत्रो को भी उन मित्रो ने गाधीजी को बदनाम करने का आधार बनाया।

इन सब बातो से और लोग तो दुखी हुए ही, महाराष्ट्र के ही अनेक सुसस्कृत भाई-बहन भी बहुत दुखी हुए। उनकी समझ मे नही आता था कि इस जहरीले प्रचार को कैसे रोका जाय।

उन्ही मे थी बम्बई की श्रीमती अवन्तिकाबाई गोखले। गाधीजी के प्रति उनकी भक्ति अपार थी। वह प्रतिवर्ष उनके जन्मदिन पर अपने हाथकते सूत की धोती बनाकर भेजती थी। उस वर्ष भी उन्होने ऐसा ही किया, लेकिन उसके साथ जो पत्र लिखा, उसमे अपने दिल की गहरी व्यथा प्रकट करते हुए उन्होने कहा, "आपके विरोध मे मराठी जगत के पत्रो और पत्रिकाओ मे इधर जेसा झूठा और विषैला प्रचार हो रहा है, उसे और अधिक सहने की शक्ति मुझमे नही रह गई है। मन अत्यन्त दुखी है। आप बिलकुल मौन है। न कुछ लिखते है, न बोलते है। हमे रास्ता सूझ नही रहा है। कोई ऐसा उपाय होना चाहिए, जिससे यह विष और अधिक न फैले।"

उसके उत्तर मे गाधीजी ने लिखा, "वहा के कुछ मित्रो द्वारा मेरे विषय मे जो विरोधी प्रचार हो रहा है, मै उससे बेखबर नही हू। लेकिन मै करू क्या ? जिस तरह कुछ मित्र मेरी घोर-से-घोर निन्दा करने मे रस ले रहे है, उसी तरह कुछ मित्र ऐसे भी है, जो मेरी बहुत बढा-चढाकर प्रशसा भी करते है। निन्दा करने वालो की निन्दा से मै क्यो मुरझाऊ ? प्रशसा करने वालो की प्रशसा से क्यो फूलू ? मै निन्दा करने वालो की निन्दा से न

तो घटता हू और न प्रशसा करने वालों की प्रशसा से बढता ही हू। जैसा भी हू, वैसा हू। न रज भर छोटा, न रज भर बडा। अपने सृजनहार के सामने आदमी सच्चा बना रहे तो फिर कही उसे खटका रहे ही नही।"

: ४३

उनकी रक्षा करना आपका दायित्व है

असहयोग आन्दोलन के प्रथम युद्ध मे गाधीजी मद्रास गये थे। मार्च (१६१६) का महीना था और वह श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के पास ठहरे हुए थे।

एक दिन तामिलनाडु के प्रसिद्ध कवि भारती उनसे मिलने आये। बिना किसी औपचारिकता के उन्होने गाधीजी से पूछा, "मि० गांधी, आज शाम को सागर तट पर एक सभा का आयोजन किया गया है। मेरा भाषण होगा। आप उसके अध्यक्ष पद का आसन ग्रहण करेगे ?"

गाधीजी ने सहज भाव से उत्तर दिया, "अगर कल सभा हो तो मैं आ सकूगा।"

भारती बोले, "यह नही हो सकता। सभा आज ही है। आपके असहयोग आन्दोलन की जय हो !"

यह कह कर भारती वहा से चले गये। न जान, न पहचान, फिर भी यह निर्भीकता ! गाधीजी को बडा आश्चर्य हुआ। पूछा, "यह कौन है ?"

राजाजी ने उत्तर दिया, "ये तामिलनाडु के राष्ट्रीय कवि सुब्रह्मण्य भारती है।"

यह सुनकर गाधीजी ने कहा, "तब इनकी रक्षा करना आप लोगो का दायित्व है।"

४१

ईश्वर ने जो कुछ दिया है सदुपयोग के लिए

नोआखाली-प्रवास के समय गाधीजी श्रीरामपुर मे ठहरे हुए थे। उस दिन वह रात को दो बजे उठे। मनु को जगाया। उसी दिन मनु के लिए छीट के सलवार और कुर्ते बनकर आए थे। गाधीजी ने उससे पूछा, "तुमने छीट या किस प्रकार की खादी ली जाय इस बारे मे से कुछ कहा था ?"

मनु ने उत्तर दिया, "यह कपडा वह नही लाये है। आपने बिरलाजी के आदमियो से कहा था, वे लाये हैं।"

गाधीजी बोले, "तब तो क्या कमी हो सकती है ? परन्तु मन मे यदि यह भाव हो कि ऐसे कपडे पहनने से और अच्छी लगूगी तो उसे निकाल देना। मनुष्य स्वाद के लिए भोजन को खट्टा, मीठा और तीखा बनाता है, परन्तु यदि वह यह वृत्ति पैदा करे कि हमारा शरीर एक देवस्थान है, इसका उपयोग सेवा के लिए होना चाहिए और सेवा करने के लिए पौष्टिक भोजन करने से शरीर कायम रह सकता है तो उस मनुष्य का जीवन

भव्य वनता है । यही बात कपडे पर भी लागू होती है। कपडे शरीर ढकने के लिए और सर्दी-गर्मी से शरीर की रक्षा करने के लिए है, न कि फैशन दिखाने के लिए। आज तो हर बात में फैशन-ही-फैशन है । मन मे दुख होता है कि क्या हमारी सस्कृति का नाश वहने ही करेगी ?"

इसके वाद चुस्त कपडे पहनने से क्या हानिया होती है, इसकी चर्चा करते हुए वह बालो के शृगार पर आ गये । बोले, "मैने तुमसे वालो की सादगी के बारे मे कहा तो है ही, एक बात और कहता हू कि वालो मे जितनी सादगी रहेगी वे उतने ही सुन्दर रहेगे । वाल सिर की रक्षा के लिए है । ईश्वर ने जो कुछ दिया है, वह सब सदुपयोग के लिए ही दिया है। उसकी दी हुई एक भी चीज व्यर्थ नही ।"

. ४५ .

वह इंकार करेगा तभी मैं सो सकूंगा

उन दिनो गाधीजी का यह नियम था कि वह प्रतिदिन अपने तीसरे पुत्र रामदास को एक घटा गुजराती, सस्कृत और अग्रेजी पढाते ने। पाठ्य पुस्तको मे हिन्दू धर्म की पहली पुस्तक, 'यग इण्डिया' के लेख और उनके भापातर भी सम्मिलित थे।

उसी अवधि मे एक वार राष्ट्रीय महासभा की बैठक अहमदावाद म्युनिसिपल कमेटी के नये हाल में आयोजित की गई। गाधीजी प्रतिदिन सवेरे चार वजे से रात के दस वजे तक

नेताओ के साथ मत्रणा मे लगे रहते थे। एक दिन वह रात के ९ बजे लौटे और बा से पूछा, "रामा कहा है?"

बा ने उत्तर दिया, "वह तो थककर सो गया है। उसे अव न जगाइये।"

गाधीजी वोले, "लेकिन मैने तो उसे प्रतिदिन एक घटा पढाने का नियम वनाया है। वह इन्कार करेगा तभी मै सो सकूगा।"

उस दिन भी नियम भग नही हुआ। रामदास को जगाकर उन्होने जव उसे कुछ देर पढा लिया तभी वह शान्ति से सो सके।

: ४६

अब तो यह हरिजनों का हो गया

गाधीजी के एक निकट के साथी के विवाह के अवसर पर उसके एक धनिक मित्र ने एक कीमती जेवर भेट करने की इच्छा की, परन्तु जिनका विवाह था, वह उस उपहार को स्वीकार करना नही चाहते थे। तव वह धनिक मित्र गाधीजी के पास आये और वोले, "वह योही तकल्लुफ कर रहे है, उपहार नही लेते।"

गाधीजी ने उस जेवर को देखा। उसकी प्रगसा भी की, लेकिन उनका विचार था कि जव दूल्हा नही चाहता तो उसे उपहार नही देना चाहिए।"

बेचारे धनी सज्जन निराश तो हुए, लेकिन क्या कर सकते थे। बोले, "अच्छा, लाइये मेरा जेवर मुझे लौटा दीजिये।"

गाधीजी ने कहा, "अब तो यह हरिजन का हो गया। वापस नहीं मिल सकता।"

धनी मित्र ठगे-से गाधीजी को देखते रह गये। लेकिन कुछ कह भी तो नहीं सकते थे। आधे मन से उनकी बात स्वीकार करके वह लौट चले, लेकिन गाधीजी उनके मन की बात जान गये थे। कुछ देर बाद सदेश भेजा, "जेवर ले जाइये, लेकिन उसकी कीमत जितने रुपये हरिजन फण्ड मे भेज दीजिये।"

दूसरे दिन उस जेवर के बदले मे उन्हे उसकी कीमत से भी अधिक का चैक मिल गया।

: ४७ :

बोलो, मैं कितना आज्ञाकारी हूं ?

परीक्षा मे सफल हुआ।"

मनु ने कहा, "मेहनत मैने की और यश आप ले रहे है।"

गाधीजी हँसते-हँसते बोले, "परन्तु मेरी तैयारी अपयश लेने की भी थी न। तुम्हारी तो वह तैयारी नही थी।"

इस प्रकार विनोद करते हुए गाधीजी तुरन्त अपना बगाली पाठ लिखने बैठ गये। निर्मल दा को दिखाया। घडी-भर पहले परीक्षक थे, घडी-भर बाद विद्यार्थी बन गये। लेकिन पहली रात वह ढाई बजे पेशाब करने के लिए उठे थे और उसके बाद फिर सो नही सके थे। यही सोचते रहे कि लोगो को अपनी बात कैसे समझाये। इतना होने पर भी वह थके नही। सब काम पूर्वत किए। सर्वश्री शाहनवाज खा और खान अब्दुल गफ्फार खा से बाते करते रहे। उस दिन विशेष रूप से मनु के सबध मे बाते हुई। पूरा कौटम्बिक इतिहास उन्हे बता डाला।

फिर मालिश करवाते समय उन्होने मनु से कहा, "खान साहब और शाहनवाज को हरेक बात की जानकारी देना मेरा धर्म है। पर ये तो महाश्रद्धालु मनुष्य है। मेरी बुराई देखना ही नही चाहते। तुम समय-समय पर उनके साथ बाते करती रहना। तुम्हे भी बहुत कुछ जानने को मिलेगा। अत्यन्त श्रद्धालु मनुष्य की अपेक्षा मेरा दोष देखनेवाले लोग मुझे अधिक पसन्द होते है। इसमे मेरी रक्षा होती है। यह सोचने का मौका मिलता है कि मै कही गलत रास्ते पर तो नही हू।"

मनु जानती थी कि वह ढाई बजे से जाग रहे है। बोली, "आप इस समय सो जाय तो अच्छा है। ढाई बजे से जाग रहे है। फिर मुझे सारी बाते समझाने की तकलीफ कर रहे है। यह सब

पाप मेरे सिर पर होगा ।"

गाधीजी मान गये । बीस मिनिट सोये । उठकर कहने लगे, "देखो, तुम्हारी सलाह मानी तो मै सचमुच ताजा हो गया । बोलो, मै कितना आज्ञाकारी हू।"

भगवान ने हम सबको उबार लिया

एक दिन आश्रम के तत्कालीन मत्री श्री छगनलाल जोशी ने गाधीजी को सूचना दी कि श्री छगनलाल गाधी के जिम्मे कोठार का जो काम है, उसके हिसाब में गड़बड पाई गई है ।

उस दिन शाम की प्रार्थना के बाद गाधीजी ने बडे व्यथित हृदय से सभी को बताया कि आज आश्रम मे एक भारी पाप प्रकट हुआ है । छगनलाल गाधी ने असत्य का आचरण किया है। हमारा सकल्प रहा है कि हम इस आश्रम में सत्य का आचरण करेगे, इसीलिए इसका नाम 'सत्याग्रह आश्रम' रखा था, लेकिन अब हमे कोई अधिकार नही है कि इस नाम को बनाए रखे। आज से हम आश्रम को 'उद्योग मदिर' कहेगे। केवल यह प्रार्थना-भूमि ही 'सत्याग्रह आश्रम' कहलायगी ।

उसके बाद गाधीजी अपने निवास-स्थान पर पहुचे । छगनलालभाई सहित सभी पुराने साथी वहा आ गये । गाधीजी ने बडी तीव्रता से आत्मनिरीक्षण शुरू किया । वह अपने भतीजे के दोष को अपने ही किसी दोष का प्रतिबिम्ब मानने लगे और अपने

को कोसने लगे। सभी लोग विकल हो उठे। थोडी आना-कानी के बाद श्री छगनलाल गाधी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। दुखी होकर वह रोने लगे। सभी उपस्थित व्यक्ति मानो एक करुण विषाद से भर उठे। इसी समय किसीने बापू के सामने एक और समस्या उपस्थित की। कुछ दिन पहले कोई अपरिचित भाई आश्रम देखने आए थे। उन्होने भेट-स्वरूप चार रुपये कस्तूरबा को दिए थे। बा ने वे रुपए तुरत आश्रम के दफ्तर मे जमा नही कराये थे। कुछ दिन बाद कराए थे। गाधीजी को इस बात से सन्तोष नही हुआ। उन्होने बा को दोषी माना। उनसे वचन लिया कि अगर आगे से उनसे कोई ऐसा दोष हुआ या पुराना कोई दोष प्रकट हुआ तो वह उन्हे और आश्रम को छोड देगी।

उस रात तीन बजे तक आत्मशुद्धि का यज्ञ चलता रहा। उसके बाद साथियो को विदा करके गाधीजी कागज-कलम लेकर एक लेख लिखने के लिए बैठ गये। उन्होने उस समय जो लेख लिखा, वह एक ऐतिहासिक लेख है। उन्होने अपने भतीजे श्री छगनलाल गाधी और कस्तूरबा के दोषो की स्पष्ट चर्चा की और जनता-जनार्दन के सामने अपना हृदय उडेलकर रख दिया।

देश-विदेश मे जिस किसीने भी इस लेख को पढा, वह स्तब्ध रह गया। कुछ व्यक्तियो के दिल दुःख से भर आए। कुछ को गाधीजी पर क्रोध आया। कस्तूरबा पर लगाए गए आरोपो की बात पढकर सरोजिनी नायडू को गहरी चोट लगी। उन्होने इसे भारत की स्त्रीजाति का अपमान माना। वह तुरन्त हैदराबाद से साबरमती पहुची और सीधे बा के पास चली गई। उनका मन

कडवाहट से इतना भर गया था कि वह गाधीजी से मिलना भी नही चाहती थी, लेकिन गाधीजी तो गाधीजी थे। समाचार पाकर हँसते-हँसते उनसे मिलने आए। उन्हे देखते ही वह उवल पडी और उन्हे खूब आडे हाथो लिया। गाधीजी शात, निरुद्विग्न भाव से सबकुछ सुनते रहे। जब सरोजिनी देवी मन का गुबार निकाल चुकी तो वह सहज भाव से हँसते हुए बोले, "सरोजिनी देवी, आज की यह घड़ी नाराज होने की नही है, खुशी से नाचने की है। समझ लो कि भगवान ने हम पर बहुत बडी कृपा की। अगर वह मुझसे यह लेख न लिखवाता और मैं उन दोषो को दबाकर बैठ जाता तो यह आश्रम आश्रम न रहता। नरक का धाम बन जाता। मुझसे यह लेख लिखवाकर भगवान ने हम सबको उबार लिया। फूल की तरह हल्का बना दिया। अब न छगनलाल कभी कोई ऐसा दोष कर सकेगा, न कस्तूरबा, न आश्रम के दूसरे साथी और न स्वतन्त्रता के सग्राम मे लगे हुए अन्य देशवासी। इसलिए मैं तो कहता हू कि तुम्हारी नाराजी अब खुशी मे बदलनी चाहिए और हम सबको भगवान की इस महान कृपा के लिए उसके गुण गाने चाहिए।"

: ४९ :

डाक्टर अपने रोगी को कैसे छोड़ सकता है !

सेवाग्राम आश्रम मे गाधीजी की कुटिया के सामने पूर्व की ओर एक और कुटिया थी। उसमे ठहरते थे उनके निकटतम

अतिथि। उन दिनो आचार्य नरेन्द्रदेव उसी मे ठहरे हुए थे। वह बहुत बडे विद्वान ही नही थे, स्वतन्त्रता-सग्राम के तपे हुए नेता भी थे। काग्रेस के भीतर समाजवादी दल के वह सस्थापक थे। दमे से वह सख्त पीडित थे। गाधीजी ने देखा तो अपने साथ सेवाग्राम ले आये।

उन्ही दिनो भारत के भाग्य का फैसला करने के लिए 'क्रिप्स-मिशन' भारत आया था। स्वाभाविक था, गाधीजी की पुकार होती। वह दिल्ली गये, बाते की और फिर तुरन्त लौट पडे। प्रेस प्रतिनिधियो ने पूछा, "आप थोडा और क्यो नही ठहर जाते?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "कोई डाक्टर अपने रोगी को कैसे छोड सकता है?"

और वह आचार्य नरेन्द्रदेव की देखभाल करने के लिए अपने आश्रम मे लौट आए।

: ५० .

यह तो बड़ी अच्छी बात है

एक दिन एक वृद्ध पुरुप गाधीजी के दर्शन करने आया। गाधीजी को सूचना दी गई और उनकी स्वीकृति आने पर उस वृद्ध को उनके पास भेज दिया गया। वहा पहुचते ही उस स्वच्छ खादीधारी वृद्ध पुरुष ने गाधीजी के आगे सौ-सौ रुपये के दस नोट रख दिये और कहा, "जो सबसे गरीब और सत्पात्र हो उन्ही के

लिए यह तुच्छ भेंट है। आपसे अधिक पता ऐसे दरिद्रनारायण का और किसे हो सकता है?"

गांधीजी ने कहा, "यह आपने बड़ा अच्छा काम किया है, पर यह तो बतलाओ, यह रकम कितने वर्षों में बचा-बचाकर जमा की थी?"

वृद्ध ने उत्तर दिया, "बहुत वर्षों में, लेकिन मैंने सौ रुपये तो पारसाल भूकम्प पीड़ितों के लिए भेज दिये थे और सौ रुपये आसाम के बाढ़-पीड़ितों के लिए। चार साल हुए, इलाहाबाद में किसानों की सहायता के लिए। मैंने पांच सौ रुपये दिये थे।"

यह सुनकर गांधीजी जितने प्रसन्न हुए, उतने ही चकित भी। पूछा, "अच्छा, तो यह तो बतलाओ भाई, आपकी तनख्वा क्या थी? और पेंशन क्या मिल रही है? आप क्या काम करते थे?"

वृद्ध ने उत्तर दिया, "मैं एक स्कूल में अध्यापक था। बहुत वर्षों के बाद जब मैंने अवकाश ग्रहण किया तब मुझे बावन रुपये मासिक वेतन मिलता था। मुझे पेंशन कुछ नहीं मिलती, पर सत्ताईस सौ रुपये मुझे बतौर इनाम के मिले थे।"

गांधीजी ने पूछा, "अवकाश ग्रहण किये कितने वर्ष हुए?"

वृद्ध ने उत्तर दिया, "पांच वर्ष।"

दिया। अब मै निश्चिन्त हो गया हू। एक सस्कृत पाठशाला खोल रखी है। अधिकतर उसीमे अपना समय लगाता हू। वह नि शुल्क पाठशाला है।"

गाधीजी प्रभावित होकर बोले, "अच्छा, इस तरह अपनी छोटी-सी तनख्वा मे से इतना रुपया बचाया है और आज उसे गरीबो के सेवाकार्य मे लगा रहे है! यह तो बडी अच्छी बात है। क्या ही अच्छा हो कि हरेक मनुष्य आपसे यह परमार्थ की कला सीख ले!"

वृद्ध ने उत्तर दिया, "महात्माजी, मैने अपने ऊपर बहुत ही कम खर्च किया है। इसीसे मै कभी-कभी गरीबो की थोडी-बहुत सेवा-सहायता कर सका हू।"

गाधीजी ने पूछा, "और यह सुन्दर खादी कहा मिली? यह तो बहुत मोटी खादी है। शाल या कम्बल ओढने की तो आपको अब जरूरत ही नही।"

वृद्ध ने कहा, "यह घर की ही बनी है।"

गाधीजी बोले, "काश, मैं भी आपकी ही तरह ऐसी ही मोटी खादी ओढता!"

हर्षातिरेक से प्रफुल्लित उस वृद्ध ने कहा, "मेरे पास अब भी कुछ रुपये जमा है, महात्माजी। मै वे सब किसी दिन लाकर आपके चरणो मे रख दूगा। मै नही जानता कि यह रुपया दू तो किसे दू? मैं तो बस एक आपको जानता हू और आप असहाय, अनाथ, गरीबो को पहचानते है। मै हृदय से आपका आभारी हू।"

आप जरा भी न हिलें

सन् १९४५ की बात है। सर पुरुषोत्तम दास ठाकुरदास उन दिनों रोग-शैया पर थे। गाधीजी जब बम्बई पहुचे तो उन्होने अपने मेजबान श्री बिरलाजी से कहा, "मै आज शाम की प्रार्थना के बाद सर पुरुषोत्तदास ठाकुरदास से मिलना चाहता हू।"

बिरलाजी ने उत्तर दिया, "रात के लगभग साढ़े आठ बजे उनसे मिलना सम्भव नही होगा।"

गाधीजी बोले, "यदि वह मुझसे नही मिल सकते तो मैं ही जाकर उनसे मिलूगा।"

ताकि आपको यह विश्वास हो जाय कि मैं कैसी सीढियो पर चढ सकता हू ।"

वह सीढिया चढकर रोगी के कमरे के प्रवेश-द्वार पर पहुच गये । बाहर से ही उल्लसित स्वर मे बोले, "आप जरा भी न हिले । मै खुद आपके पास आकर बैठ जाऊगा ।"

बीमारी आदि के बारे मे बिना एक शब्द पूछे वह इस प्रकार वार्त्तालाप करने लगे, मानो रोगी को स्वास्थ्य लाभ करा रहे हो । बीस मिनट बाद वह वहा से विदा हुए । जो नर्स वहाँ उपस्थित थी उसने पहली बार गाधीजी को देखा था। बोली, "यदि बीमारपुर्सी के लिए आने वाले सभी लोग ऐसे हो तो मै निश्चित रूप से कह सकती हू कि रोगी को स्वास्थ्य लाभ कराने मे डाक्टरो की अपेक्षा वे अधिक उपयोगी सिद्ध होगे ।"

: ५२ :

मेरे लिए तो यह पवित्र यात्रा है

गाधीजी की नोआखाली की सच्ची यात्रा चण्डीपुर गाव से शुरू हुई । उस दिन चलने से पहले कई बहनो ने बापू के मस्तक पर तिलक लगाया और प्रार्थना की । गाधीजी की इच्छा के अनुसार उस दिन 'वैष्णव जन तो तेने कहिये' भजन गाया गया । लेकिन उसमे इतना परिवर्तन कर लिया गया था कि हर कडी पर जहा 'वैष्णव जन' शब्द आता है वहा बारी-बारी से 'मुस्लिम-जन', 'खिस्ती जन', 'सिक्ख जन', 'पारसी जन',

'हरिना जन' गाया गया। गाधीजी स्वय भी स्वर-में-स्वर मिला रहे थे।

यहा से उन्होने चप्पल पहनना भी छोड दिया। पूछा गया, "आप ऐसा क्यो करते है ?"

तो मेरे पास समय नही है, दूसरे जो चीज देश के काम नही आती उसे देखने मे मेरा मन नही लगता। फिर तुम्हे इनाम चाहिए, वह मै कहा से दूगा ?"

लेकिन वे लोग भला कब मानने वाले थे ! उन्हे अपनी कसरत के हाथ दिखाने ही थे। वे लोग एक मुक्के से पत्थर तोड सकते थे, पर गाव का रास्ता ठीक करने को कहा जाय तो नही कर सकते थे। भारी-से-भारी वजन उठा सकते थे, पर किसी सकट-निवारण के काम मे जाने के लिए उनका मन उन्हे आज्ञा नही देता था। इतना शारीरिक बल होते हुए भी वे भिखारी ही बने रहते थे। पैसा कमाने के अतिरिक्त अपनी शक्ति का कोई और उपयोग उन्हे नही सूझता था। कलकत्ता जाने के लिए उन्हे पैसे की जरूरत थी। उन्होने कहा, "हम बहुत ही लाचार है।"

गाधीजी बोले, "लाचारी और तुम्हे ! तुम्हारे शरीर मे तो इतना अधिक बल है कि एक घूसा मारकर पत्थर तोड सकते हो। मै तोडना चाहू तो मेरा हाथ ही टूट जाय।"

उनमे से एक ने उत्तर दिया, "पर आपके पास तो एक दूसरा ही उच्च प्रकार का बल है।"

गाधीजी बोले, "वह बल तो तुम्हारे अन्दर भी है।"

पहलवान ने कहा, "जी नही। हमारे अदर वह बल होता तो हम आज गाव-गाव भीख मागते न फिरते !"

गाधीजी बोले, "वह बल जितना मेरे पास है, उतना ही तुम्हारे पास भी है। अन्तर इतना ही है कि तुम्हारे अन्दर वह सो रहा है और मेरा बल जागृत है, काम करता है। मैने उसको विक-

सित किया है। हर आदमी उसे विकसित कर सकता है। लेकिन हर आदमी पहलवान नही बन सकता। मै तो प्रयत्न करने पर भी नही हो सकता।"

: ५४

हम सब तो ट्रस्टी हैं

सन् १९३६ के आरम्भ मे सेवाग्राम-आश्रम में एक हट्टा-कट्टा नवयुवक गाधीजी के पास आया। बोला, "आप मुझे अपने यहा नौकर रख लीजिये।"

विनोबाजी के आदमियो के नीचे उसने काम किया था, इसलिए गाधीजी उसे मना नही कर सकते थे। कहा, "तुम्हे हम अपने कुटुम्ब के आदमी के रूप में दाखिल कर लेगे, बतौर नौकर के नही, क्योकि हम अपने यहा किसी को नौकर नही रखते। और जगह जितना तुम्हे मिले, उससे कुछ ज्यादा ही पैसा हम तुम्हे देगे। खाना अलग। शर्त केवल इतनी है कि तुम एक कुटुम्बी की तरह काम करोगे।"

कई महीनो तक वह विश्वास के साथ काम करता रहा। प्रसन्न मन से विना थके वह काम करता रहता था। अपने काम के अलावा भणसालीजी की सेवा जैसे कुछ और भी काम उसने स्वेच्छा से स्वीकार कर लिये। वह नित्य नियम से प्रार्थना में भी आता था। काम यदि अधिक होता तो भी वह उसी आनन्द के साथ करता।

लेकिन फिर भी वह चोरी करने के लोभ मे फस गया। पहली बार जब चोरी की तो पता नही लगा। दूसरी बार पकडा गया। स्वीकार करने का उसमे साहस नही था, परन्तु गाधीजी ने अपने आत्यतिक प्रेम के बल से उससे अपराध स्वीकार करवा ही लिया। उसकी अपराध-स्वीकृति से सबकी आखो के सामने एक दुखद चित्र खिच गया। हमारे देश के निर्धन व्यक्ति कैसी बुरी हालत मे रहते है! पहली बार उस युवक ने अपनी गाय के लिए थोडा-सा गेहू का भूसा चुराया था। इस बार अपने बाप के लिए कुछ सेर गेहू चुराये थे। बेचारा बुड्ढा बाप दमे से पीडित था। काम नही कर सकता था। घर मे स्त्री थी और कई बच्चे भी। बेचारी स्त्री बडी मुश्किल से मजूरी आदि करके किसी तरह परिवार का पेट पालती थी। नवयुवक की अपनी स्त्री और तीन बच्चे भी थे। लेकिन घर मे कमाने वाले केवल दो ही थे—वह युवक और उसकी मा। उसकी स्त्री बीमार थी।

बुड्ढा दस मील दूर एक गाव मे रहता था। युवक आश्रम के पास एक कोठरी मे। कोठरी का उसे डेढ रुपया महीना किराया देना पडता था, जो उसके वेतन के दस प्रतिशत से अधिक पडता था।

वह बहुत दु खी था। उसे अपनी सद्वृत्ति के विरुद्ध जिन परिस्थितियो मे चोरी करनी पडी, उन पर विचार करते हुए आश्रम के लोगो को भी दु ख हुआ। युवक ने गाधीजी से कहा, "मुझे आप जो चाहे, सजा दे। मेरी तो आपके पास आने की हिम्मत भी नही पडती थी। मुझे ऐसा लगता था कि यहा से कही चला जाऊ। मुझे अब यहा अपना मुह नही दिखाना चाहिए।

आपने मुझ पर अपार स्नेह रखा है। आपने मुझे घर का ही आदमी समझा है। पर मै आपके स्नेह का पात्र नही हू।"

गाधीजी बोले, "मै तुम्हे कुछ सजा नही दे सकता। निकाल भी नही सकता। मै तो इतना ही कहता हू कि फिर कभी ऐसा न करना। तुम्हे जिस चीज की जरूरत हो, माग लेना, पर चोरी न करना। यहा जो कुछ है, वह जनता की सम्पत्ति है। हम सब तो ट्रस्टी है। तुम्हारा पिता भले हो यह गेहू ले जाय।"

बुड्ढा वही था। कपडे के एक टुकडे की ओर इशारा करके बोला, "यह भी मुझे ले जाने दो।"

गाधीजी ने कहा, "ले जाओ। लेकिन तुम्हारे लडके को फिर कभी इस तरह लालच मे नही पडना चाहिए।"

: ५५ :

लाओ, कार्ड बोर्ड का वह टुकड़ा दो

सन् १९५३ मे चिथडा लपेटे एक ऐसा बुड्ढा सेवाग्राम आश्रम मे आया, जो सवेरे से शाम तक काम मे जुटा रहता। कूडा-कचरा उठाने या दूसरा और कोई भी हल्के-से-हल्का काम करने से उसे कोई आपत्ति नही थी। उसका एक भी दात नही गिरा था। चौबीस घटे मे वह एक ही बार खाता था।

कुछ दिनो के लिए वह आश्रम से चला भी गया, लेकिन फिर वापस आ गया। वर्षा, सर्दी कुछ भी तो उसके उत्साह को भग नही कर सकता था। हमेशा उघाडे शरीर, **फटी-पुरानी**

धोती पहने हुए उसे काम करते ही पाया जाता था। एक दिन उसने गाधीजी के पास आकर कहा, "मुझे अब एक जोडा जूता चाहिए। दिन मे तो मुझे जूते की जरूरत नही, पर रात को अधेरे या बरसात मे काम के समय पहन लिया करूगा।"

एक बार उसने मुलायम कार्ड-बोर्ड के कुछ रद्दी टुकडो को सीकर एक जोडा जूता तैयार कर लिया था। पर कागज का जूता भी एक दिन से अधिक चल सकता है ? इसलिए उसने गाधीजी से कहा, "किसी का फटा-पुराना फालतू जोडा पडा हो तो वह मुझे दिला दीजिये।"

गाधीजी ने पूछा, "फटा हुआ जोडा क्यो ?"

बुड्ढे ने जवाब दिया, "बचा-खुचा अन्न खाकर और फटा-पुराना जोडा पहनकर गुजर करना ही अच्छा है।"

गाधीजी ने कहा, "पर मै तुम्हारे लिए नया जोडा बनवा दू तो ?"

वह बोला, "तो यह आपकी कृपा होगी। पर मुझे ये नये जमाने की चप्पल या स्लीपर पसन्द नही। मुझे तो पुराने ढग का अपना वही ओखाई जोडा चाहिए।"

गाधीजी ने कहा, "ठीक है, तुम्हारे लिए अपने चर्मालय से हम वैसा जोडा तैयार करा सकते है।"

तब उसने कहा, "पर बिना देखे ओखाई जोडा मोची कैसे बना सकेगा ? बिना नालवाडी गये मै मोची को कैसे समझा सकता हू ? पर मै एक दिन का भी काम कैसे छोडू ? और बिना गये काम बनेगा नही।"

गाधीजी बोले, "तुम्हे अपना काम छोडकर जाने की

जरूरत नही और न मोची को ही यहा बुलाने की जरूरत है। लाओ, मुझे कार्ड-बोर्ड का टुकडा दो। मै इसका ओखाई जोडे का नमूना बना दूगा और इस नमूने के अनुसार जोडा बना देने के लिए मोची को कहला दूगा।"

यह कहकर गाधीजी ने कुछ ही देर मे कार्ड-बोर्ड का 'ओखाई' जोडा बना दिया। तीस वर्ष पहले उन्होने यह जोडा देखा था, पर उसकी बनावट याद करके उन्होने उस जोडे का नमूना तैयार कर दिया। ओखाई का वह हू-ब-हू नमूना देखकर सब लोग अचरज मे पड गये।

५६

उसे अस्पताल ले जाने की जरूरत नहीं

उन दिनो (अक्तूबर, १९३५) मीराबहन का अधिकतर समय गाव मे बीमारो को उनके झोपडो मे जाकर देखने-भालने मे बीतता था। गाधीजी के आदेशानुसार अधिकाश रोगियो को देसी दवाइयो के नुस्खे बतलाने मे ही वह व्यस्त रहती थी। कुछ लोगो को, जिन्हे विशेष डाक्टरी परीक्षा और इलाज की आवश्य-कता होती, उन्हे वह सिविल अस्पताल भिजवा देती। उनके रोगियो मे पशु भी शामिल थे। वह अपने काम में इतना अधिक तल्लीन रहती कि पूछिए नही। बात भी करती तो केवल अपने रोगियो के सबध में ही। एक दिन गांधीजी से आकर बोली, "बापूजी, वहा एक गाय की टाग टूट गई है। वह अच्छी दुधारू

गाय है। अगर ठीक-ठीक इलाज न हुआ तो उसका सारा दूध छनक जायगा। मैने डाक्टर को कहला भेजा था, पर उसका यह कहना है कि गाय को पशुओ के अस्पाल मे भेजना चाहिए। वही उसका ठीक-ठीक इलाज हो सकेगा। अब हम किस तरह उस अपग गाय को गाडी मे उठाकर लादे और वहा तक ले जाय ? ऐसे करने से तो उसे बहुत अधिक कष्ट होगा।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "उसे अस्पताल ले जाने की जरूरत नही है। अपनी घोडी पर सवार होकर तुम तुरन्त चली जाओ और डाक्टर को सारी स्थिति समझा दो। उससे कहो कि वह स्वय गाव मे जाकर गाय का इलाज करे। यह उसका कर्त्तव्य है। उसे उठाने-धरने मे जो कष्ट होगा, वह तो है ही, इसके अलावा अस्पताल तक अपनी गाय ले जाने के लिए गाडी का किराया देना एक गरीब आदमी को पुसा भी तो नही सकता।"

मीराबहन ने कहा, "हा, सो तो मै समझती हू। अभी थोडे दिन की बात है कि एक गरीब स्त्री के बच्चा हुआ था। पौष्टिक भोजन न मिलने से उस बेचारी के शरीर मे खून की कमी हो गई।"

गाधीजी ने उसे गोलिया देते हुए कहा, "तुम उसे ये गोलिया दे देना और एक हफ्ते मे बतलाना कि उसकी तबीयत कैसी है ?"

मीराबहन बोली, "और उस लडके का क्या किया जाय ? उसके फोडो पर मक्खिया बैठ-बैठकर उसे तग करती है।"

गाधीजी ने कहा, "नीम के गर्म पानी से फोडो को धोकर बोरिक का मरहम लगा देना और पट्टी बाध देना।"

५७

उस लड़के का क्या हुआ ?

सुदूर दक्षिण भारत से एक हरिजन लडका प्रशिक्षण के लिए सेवाग्राम आनेवाला था। एक मित्र ने उसके आने की सूचना देते हुए यह आशा प्रकट की थी कि कोई-न-कोई व्यक्ति उसे स्टेशन पर मिल जायगा। महादेव देसाई ने इस बात को नोट कर लिया था, लेकिन फिर भी वह किसीसे स्टेशन जाने के लिए कहना भूल गये। साधारणत उनको स्वय ही स्टेशन जाना चाहिए था, लेकिन अनेक चिन्ताओ मे घिरे रहने के कारण वह कुछ भी नही कर सके। उस दिन गाधीजी के खून का दबाव अपनी चरम सीमा तक पहुच गया था। दूसरे दिन डाक्टरो की सलाह के अनुसार वह मौन धारण किए हुए थे। बहुत देर तक महादेवभाई इधर-उधर के कामो मे लगे रहे, लेकिन जैसे ही वह गाधीजी के पास पहुचे, उन्होने लिखकर पूछा, "उस लडके का क्या हुआ ? कोई उसे स्टेशन पर लेने के लिए गया था ?"

यह सुनकर महादेवभाई बहुत लज्जित हुए। जवाब देते नही बना। उन्होने तुरन्त इसका पता लगाया कि वह आया है या नही। वह आ चुका था। अपनी मातृभापा में बात करनेवाला एक साथी भी उसने ढूढ निकाला था और भोजन करने के बाद अबतक वह आश्रम का एक सदस्य बन चुका था। गाधीजी ने उने बुला भेजा और लिखा, "उससे पूछो कि वह यहां कब आया ?"

लडके ने सहज भाव से जवाब दिया, "आज सवेरे।"

गाधीजी ने लिखा, "उससे पूछो कि वह किस वक्त यहा आया ?"

लडके ने उसी सहज भाव से उत्तर दिया, "आज सवेरे।"

गाधीजी ने पूछा, "सवेरे कितने बजे ? यहा आने मे कितना समय लगा और किसने यहा का रास्ता बताया ?"

लडके ने उत्तर दिया, "मै स्टेशन से सीधा यही आया हू।"

गाधीजी ने पूछा, "जगह का पता लगाने मे कोई दिक्कत तो नही हुई।"

लडके ने उत्तर दिया, "नही, किसीने मुझे रास्ता बता दिया था।"

गाधीजी ने फिर लिखा, "जिस आदमी ने तुमको यहा का पता बताया है, उससे तुमने बातचीत कैसे की ? क्या तुम हिन्दी जानते हो ?"

लडके ने उत्तर दिया, "हा, कुछ थोडी-सी।"

गाधीजी ने लिखा, "उससे पूछो कि वह कोई पत्र लाया है या नही ?"

तब लडके ने अपने साथ लाया हुआ पत्र, फल और शहद गाधीजी को दिये। उन्होने लिखा, "अब इसे के पास ले जाओ और उनसे कहो कि इससे मित्रता करे। इसकी जो कुछ जरूरत हो उसकी पूर्ति करे।"

उसके बाद गाधीजी खामोश हो गये। लेकिन वह ऐसी खामोशी थी कि महादेवभाई के प्राण सूख गये। बोलने से शायद

उतने न सूझते। उनकी लापरवाही से गाधीजी को बहुत चोट पहुची थी। श्रीमती सेगर या सरदार पटेल जैसे व्यक्तियो की बनिस्बत उस हरिजन लडके के लिए स्टेशन जाने की कही अधिक आवश्यकता थी। वह बालक ही था। तेलुगु भाषा के अलावा और कोई भाषा वह नही जानता था। अपने स्थान से कभी बाहर भी नही गया था। इसीलिए महादेवभाई को लगा कि इस घटना के कारण गाधीजी के खून का दबाव अवश्य ही थोड़ा-बहुत बढ गया होगा।

: ५८ :

बोतल से रोटी अच्छी बेली जा सकती है

यरवदा जेल मे महादेव देसाई गाधीजी के साथ ही थे। एक बार उन्हे रोटी बेलने के लिए बेलन की आवश्यकता हुई। जब तीन-चार बार कहने पर भी बेलन नही आया तब वार्डर ने कहा, "आज तो बोतल से रोटी बेल लीजिये। कल तक बेलन जरूर आ जायगा।"

वल्लभभाई बोले, "यहा ऐसे लोग भी मौजूद है, जो बोतल से रोटी बेलते है।"

गाधीजी ने कहा, "सचमुच वल्लभभाई, बोतल से रोटी अच्छी बेली जाती है।"

गाधीजी दक्षिण अफ्रीका मे यह प्रयोग कर चुके थे। चर्चा

चलने पर महादेवभाई ने पूछा, "जब ग्राप फिनिक्स ग्राश्रम मे रहने के लिए गये थे तब रसोइया तो था न ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "नही, उससे पहले ही छुडा दिया था। एक ब्राह्मण रसोइया हमारे पास था। वह बहुत ग्रच्छा था। उसके बाद दूसरा ग्राया। वह बहुत जिद्दी था। बोला, 'भाई-साहब, ग्रगर ग्राप मिर्च वगैरा इस्तेमाल नही करने देगे तो काम नही चलेगा।' इसपर मैने कह दिया तुम भले ही चले जाग्रो। तब से रसोइये के बिना काम चलाने लगा। खाना बनाना, कपडे धोना, पाखाने साफ करना ग्रौर पीसना, ये सब काम घर मे ग्रपने हाथ से ही कर लेते थे। पीसने के लिए छ पौण्ड के मूल्य की लोहे की चक्की थी। एक ग्रादमी से तो वह चलती भी नही थी। हा, दो मजे मे पीस लेते थे। सुबह-सुबह उठकर मेरा यही पहला काम होता था, जिसे चाहता उसे ग्रपने साथ ले लेता। खडे-खडे पीसना पडता था। हत्था घुमाने के लिए भी दो ग्रादमी लगते थे। पन्द्रह मिनट मे सारे घर का ग्राटा पिस जाता था। जैसा चाहे वैसा, मोटा या महीन।"

: ५६ :

श्रद्धा बड़ी चीज है

यरवदा जेल मे गाधीजी मगन चर्खा चलाने का प्रयोग कर रहे थे। चलाते-चलाते उस पर दाया हाथ बैठ गया तो वह उत्साह मे ग्रा गये, लेकिन दूसरे दिन वह चर्खा किसी भी तरह नही चला।

नौ-दस वजे तक चलाया, परन्तु पूनिया विगडने के सिवा कोई परिणाम नही निकला। दोपहर को भी ऐसा ही हुआ। चर्खे के जोत कसे, तेल दिया, सव उपाय किये, परन्तु व्यर्थ। वल्लभभाई पटेल सो कर उठे तो कहने लगे, "वहुत कात लिया, अव वन्द कीजिये।"

गाधीजी वोले, "हा, काता-काता, हमारा सघ रुक जानेवाला नही है।"

वल्लभभाई ने कहा, "नीचे वहुत-सा काता हुआ पडा दीखता है।"

लेकिन शाम होते-न-होते वल्लभभाई भी और विनोद नही कर सके। गाधीजी ने वाए हाथ से शुरू किया। पाच घटे मेहनत की होगी। शाम को विलकुल थक गये थे, तुरन्त सोने चले गये। जाते-जाते वल्लभभाई से वोले, "देखिए कल चर्खा जरूर चलेगा, श्रद्धा वडी चीज है।"

वल्लभभाई वोले, "इसमें भी श्रद्धा ?"

गाधीजी ने कहा, "हा-हा, श्रद्धा तो होनी ही चाहिए।"

और अगले दिन वह अधिक सफल हुए। तीन घटे कातकर १३१ तार निकाले। वल्लभभाई से कहा, "देखिए, आज कैसा परिणाम आया है ?"

वल्लभभाई ने कहा "हा, देख रहा हू। नीचे काफी पड़ा है।"

गाधीजी वोले, "मगर यह सूत की फेनी वन्द हो जायगी तव तो कहेगे कि अव ठीक है।"

तीसरे दिन कातते-कातते वोले, "यह एक वड़ी तालीम है।"

महादेवभाई ने उत्तर दिया, "यह कहने की जरूरत नही है। देख ही रहे है न।"

गाधीजी बोले, "नही, मै इस अर्थ मे नहीं कहता। ६३ वर्प की उम्र मे इतनी मेहनत कर रहा हू, यह तुम्हे तालीम मालूम हो सकती है, मगर मै कहता हू कि इस उम्र मे भी मुझे इसमे खूब रस आ रहा है। परिश्रम की लज्जत ही और है। मेहनत का मजा तो वह स्त्री जानती है, जिसके बच्चा होनेवाला हो।

६०

सच्ची खूबी सीधा रखने में ही है

यरवदा जेल मे गाधीजी एक पट्टे का तकिया लगाकर बैठते थे। इस पट्टे को वह अक्सर दीवार से सीधा लगाकर रखते थे। कोण बनाकर नही। महादेवभाई ने कहा, "बापू, यदि आप पट्टे को कोण बनाकर रखे तो वह गिरा न करे और जरा आराम भी मिले।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "आराम तो मिले, मगर सच्ची खूबी सीधा रखने मे ही है। इससे कमर और रीढ सीधी रहती है, नही तो टेढी हो जाय। यह नियम है कि किसी चीज को सीधी रखे तो उसके सहारे सभी चीजो को सीधा रहना पड़ेगा और यदि टेढा रखा तो फिर कई दोप घुस आयगे।"

कर्मचारी कैदियों की सेवा के लिए हैं

उस दिन गाधीजी से मिलने के लिए यरवदा जेल में कई व्यक्ति आये थे। उन्हीमे थे श्री जमनादास और श्री ब्रेलवी। गाधीजी ने उनके साथ काफी विनोदभरी वाते की। इन लोगो को कर्मचारियो ने ऐसी पट्टी पढा रखी थी कि कुछ पूछने की उनकी हिम्मत ही नही होती थी। गाधीजी ने उनपर दवाव डालकर पूछा, "क्या तुम्हे कोई शिकायत नही करनी है? नासिक मे यहा से अच्छा हाल था या वुरा?" आदि-आदि।

इसका जवाव सुपरिन्टेन्डेन्ट ने ही दिया। वोला, "इनको एक शिकायत है और वह यह कि रविवार को इन लोगो को दो वजे वन्द कर दिया जाता है। वह इन्हे अनुकूल नही पडता। मेरी मुश्किल यह है कि कर्मचारियो को उस दिन देर तक ठह-रना पडता है।"

गाधीजी ने कहा, "यह तो कोई वचाव नही। कर्मचारी कैदियो के लिए है या कैदी कर्मचारियो के लिए?"

सुपरिन्टेन्डेन्ट को यह अच्छा नही लगा। वोले, "यह कैसे? कर्मचारी कैदियो के लिए कैसे? कर्मचारी तो कैदियो को जेल मे रखते हैं।"

गाधीजी ने कहा, 'तो क्या कर्मचारियो को कैदियो को सजा देने के लिए ही रखा है? सच पूछा जाय तो कर्मचारी कैदियो की सेवा के लिए ही हैं। उनकी तन्दुरस्ती कायम रखना

और कानून के भीतर जितनी सुविधाए दी जा सकती है वे उन्हे देने के लिए ही है ।"

सुपरिन्टेन्डेन्ट इस वात का क्या उत्तर दे सकते थे !

: ६२ :

मनुष्य कितना दुर्बल है

सन् १९३३ मे गाधीजी जव यरवदा जेल मे उपवास आरभ करनेवाले थे तब राजाजी और शकरलाल बैंकर ने सुझाव दिया था कि उपवास शुरू होने से पहले वह डाक्टर को शरीर की जाच कर लेने दे । गाधीजी ने कहा, "इस तरह मै डाक्टर से जाच नही करवा सकता, क्योकि यह तो मेरी अश्रद्धा की निशानी होगी।"

राजाजी बोले, "आप हमारी एक भी वात नही मानते है और दावा करते है कि आपसे भूल होती ही नही ।"

यह सुनकर गाधीजी उबल पडे और वोले, "मेरी श्रद्धा पर आप ऐसा प्रहार नही कर सकते । मुझे विश्वास है कि मै उपवास से जीता उठूगा । इतना आपके और मेरे लिए काफी होना चाहिए । मेरी श्रद्धा को कमजोर न करना, आपका मित्र धर्म है। उपवास शुरू करने से पहले मै डाक्टर से जाच कराना मजूर नही कर सकता ।"

गाधीजी के मन को दुख पहुचा, इस बात पर अफसोस करते हुए दोनो मित्र वहा से चले गये । शाम को घूमते हुए अचानक गाधीजी को लगा कि भूल उनकी थी । वोले, "उनके साथ मैने

बडा अन्याय किया। मनुष्य कितना दुर्बल है, कितनी भूले करता है। शुद्धि के लिए उपवास करने बैठा हू तो भी मित्रो पर मैने क्रोध किया। उनसे क्षमा मांगूगा।"

सवेरा होते ही उन्होने राजाजी के नाम पत्र लिखा, "आप मुझे प्राणो से भी ज्यादा प्रिय है। मैने आपका और शकरलाल का वहुत ही जी दुखाया। यह कहने की जरूरत नही कि आप मुझे क्षमा कर दीजिये, क्योकि क्षमा तो आपने मुझे मागने से पहले ही कर दिया है। पर मैने कल बेवकूफी से जिस वात से इकार किया था, वही बात अव करने को तैयार हू। अभी या जब आपकी इच्छा हो, मै किसी भी डाक्टर से जाच कराने को तैयार हू। शर्त इतनी ही है कि सरकार की इजाजत मिलनी चाहिए। मेरे खयाल से इस जाच का परिणाम प्रकाशित नही किया जा सकता, क्योकि यह डर है कि उसका राजनैतिक उपयोग होगा। मुझे यह भी कहना चाहिए कि डाक्टर से जाच कराने से उपवास रुकेगा नही। मिलने पर और बाते करेगे। यह तो उस मैल को निकाल डालने के लिए लिखा है, जो कल मेरे हृदय मे घुस गया था।"

: ६३ :

यहां से तुम्हें मुफ्त आशीर्वाद नहीं मिलेगा

एक दिन सरोजिनी नायडू एक नव-दम्पत्ति को गाधीजी के पास लेकर आई। वे गाधीजी का आशीर्वाद चाहते थे। उस

नवोढ़ी लडकी को गाधीजी 'तिलक स्वराज्य फण्ड' के जमाने से जानते थे। उसने उस समय बहुत-सा रुपया जमा किया था। अपने भी अधिकतर गहने दे दिये थे। गाधीजी बोले, "तुम्हे वे दिन याद है न? तुम्हारी शादी से मुझे खुशी हुई, पर यहा से तुम्हे मुफ्त आशीर्वाद नही मिलेगा। तुम्हे पहले हरिजनो को आशीर्वाद देना चाहिए।"

नवोढा ने कहा, "किस तरह दू! आपको चाहिए सो माग लीजिये।"

गाधीजी बोले, "पर मै कैसे मागू? तुम्हे तो अपने पति की आज्ञा लेनी चाहिए। मुझे तुम दोनो के बीच झगडा नही कराना है।"

नवोढा ने दृढतापूर्वक कहा, 'हम दोनो के बीच मे झगड की कोई गुजाइश ही नही है।"

यह कहते हुए उसने अपनी सोने की चूडिया उतार कर गाधीजी के चरणो मे रख दी। उस समय सब खिलखिला कर हँस रहे थे।

६४

वधू कहां है?

एक बार गाधीजी पडित जवाहरलाल नेहरू के साथ तीन दिन के लिए शान्तिनिकेतन गये। महाकवि रवीन्द्रनाथ और वहा के सभी प्राध्यापको और विद्यार्थियो ने उनके स्वागत के लिए

जोरदार तैयारी की। उनके ठहरने के कमरे को बडे कलात्मक ढग से सजाया, ऐसा कि उसका सौन्दर्य देखनेवाले को मुग्ध कर देता था।

गाधीजी आये। साथ मे थे जवाहरलाल, महादेव देसाई और खादी प्रतिष्ठान के सतीशबाबू। प्राचीन वैदिक पद्धति से सबका स्वागत हुआ। गुरुदेव ने स्वय अपने हाथ से गाधीजी के भाल पर चदन और कुकुम का टीका लगाया और फिर ले चले सबको उनके आवास-स्थल की ओर। गाधीजी ने अपने कमरे की सजावट पर एक नजर डाली। बड़े जोर से हँसे। बोले, "यह सब क्या है ? आखिर मुझे इस सुहाग कमरे मे क्यो लाया गया ?"

गुरुदेव भी कम विनोद-प्रिय नही थे। कहा, "आप यह न भूले कि यह एक कवि का आवास है।"

गाधीजी ने पूछा, "अच्छा, तो फिर वधू कहा है ?"

कवि बोले, "हमारे हृदयो की चिर युवती रानी शान्तिनिकेतन आपका स्वागत करती है।"

गाधीजी ने कहा, "सच मानो, वह इस खोखले मुह के बूढे भिखारी को मुश्किल से ही दूसरी बार आख उठा कर देखेगी।"

गुरुदेव बोले, "नही, सो नही होगा। हमारी रानी ने सदा सत्य को प्यार किया है और इन सारे लम्बे वर्षो मे निर्विवाद रूप से उसीकी पूजा की है।"

गाधीजी बोले, "तब तो इस खोखले मुह के बूढे आदमी के लिए भी यहा कुछ आशा है।"

काफी देर तक यह विनोद-वार्ता चलती रही। दूसरा दिन हुआ। गुरुदेव मेहमानो की सुख-सुविधा की देख-भाल करते हुए

[illegible]-ओर मे जा पहुचे । देखते है, वे सब लोग तो कभी के उठ कर अपने काम मे लग गये है। प्रार्थना हो चुकी है। सतीशबाबू लडके-लडकियो की एक टोली को हाथ के पीजन से कपास धुनना सिखा रहे है। पीजन का स्वर जैसे सगीत का स्वर हो। गुरुदेव को यह स्वर बहुत प्यारा लगा। लेकिन गाधीजी के कमरे मे पहुचकर वह चकित रह गये। कमरे का सारा शृगार उतार दिया गया था। गाधीजी का पलग खुली छत पर पडा हुआ था। चारो ओर फाइले थी, चर्खे थे। विनोद-प्रिय गुरुदेव बोले, "हरे राम, हरे राम! भला इस सुहाग के कमरे का क्या हुआ! देखता हू कि दुलहिन जहा-की-तहा है, पर क्या दुलहा भाग गया है?"

गुरुदेव के स्वागत के लिए खडे होते हुए गाधीजी खूब जोर से हँस पडे। बोले, "मै तो पहले ही चेतावनी दे चुका था कि दुलहिन बिना दात के बूढे आदमी को गाठनेवाली नही है।"

: ६५ :

बड़ी दिखाई देनेवाली चीज़ मुझे बड़ी नहीं लगती

सन् १९३२ मे गाधीजी जब यरवदा जेल मे थे तब उन्होने किसी सम्बन्ध मे लार्ड सेकी को खत लिखा था। कई दिनो बाद महादेवभाई ने गाधीजी से पूछा, "बापू, सेकी के खत का जवाब अब आना चाहिए।"

गाधीजी बोले, "कौन-सा खत?"

महादेवभाई ने कहा, "वही जो आपने उस लेख के वारे में लिखा था।"

गाधीजी को अब भी कुछ याद नही आया। वोले, "उसे पत्र लिखा था ? कव ?"

वल्लभभाई ने कहा, "अरे, बापू, इस तरह भूलेगे तो कैसे काम चलेगा ? अभी तो हमे स्वराज्य लेना है।"

महादेवभाई ने विस्तार से बताया, तव कही गाधीजी को याद आया। वोले, "अव कुछ धुधला-धुधला स्मरण होता है।"

गाधीजी की स्मृति बहुत तेज मानी जाती थी, लेकिन इस पत्र की बात वह भूल गये, यह वडे आश्चर्य की वात थी। इसी-लिए रात को सोते समय महादेवभाई ने पूछा, "वापू, आपको छोटी-छोटी वाते ऐसे याद रहती है कि मुझे अक्सर आश्चर्य होता है। तव इतनी वडी वात, जो पत्र आपने इतनी अधिक चर्चा और विचार के वाद लिखा था, आप कैसे भूल गये ? आज ही आपने कहा था कि दाऊद को लिखा हुआ पत्र फला आदमी के हाथ रखा था। वह आपको याद रहे और इसे आप भूल जाय, इससे विस्मय होता है।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मेरे बारे मे ऐसा हुआ, इसका कारण यह है कि इन दोनो छोटे-छोटे पत्रो का मूल्य मेरे सामने अलग-अलग था। जिस वात में किसी मनुष्य का कल्याण समाया हुआ हो, उसे मै कभी नही भूलता।"

महादेवभाई बोले, "हा, स्मृति की व्याख्या तो यही है न कि जिसे याद रखने की जरूरत हो, उसे याद रखना और वाकी को भूल जाने की शक्ति।"

गांधीजी ने कहा, "हा, सेकी के खत को मैंने इतना महत्व दिया ही नही था। उसे लिखवाया और भूल गया। दाऊद का पत्र इसलिए याद रहा कि उसमे एक इसान की गहरी भलाई की वात थी। सेकी को लिखवाकर मै भूल गया। सच वात यह है कि वडी दिखाई देनेवाली चीजे मुझे वडी नही लगती और छोटी चीजे मेरे लिए वड़ी वन जाती हैं। महाभारत से दिखाई देनेवाले काम मुझे कभी महाभारत लगे ही नही। चम्पारन से लगाकर आजतक के सव काम मैं ढूढने नही गया था। मगर ऐसा लगता है, मानो वे मेरी गोद मे आ पडे हो और इसी तरह चला जा रहा है। भगवान निभा रहा है।"

संदर्भ

इस पुस्तक के प्रसग जिन पुस्तको से सम्पादित रूप मे लिये गए है, उनके नाम, प्रसगो की सख्या तथा लेखको के नाम साभार दिये जारहे है :

एकला चलो रे (मनुबहन गाधी) ४४
ऐसे थे बापू (आर० के० प्रभु) १०, ३०, ३८
किशोर, अप्रैल १६४८ (प्रभुदयाल अग्निहोत्री) १५
कुछ देखा, कुछ सुना (घनश्यामदास बिडला) ३६
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) एडमण्ड प्रीवेट २८
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) भागीरथ कानोडिया १
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) महावीर त्यागी ३५,
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) मार्तण्ड उपाध्याय २७,
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) श्रीप्रकाश ३४,
गाधी व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव (सकलन) श्रीमन्नारायण ३१
गाधी शताब्दी पारिजात स्मारिका (महेशप्रसाद सिंह) ५,
गाधीजी एक झलक (श्रीपाद जोशी) २६
गाधीजी की देन (डा० राजेन्द्रप्रसाद) ४०, ४१
गाधीजी की साधना (रा० म० पटेल) २,
गाधीजी के जीवन-प्रसग (स० चद्रशकर शुक्ल) २१, ५१
गाधीजी के पावन प्रसग (लल्लूभाई मकनजी) ६,
गाधीजी के सम्पर्क मे (स० चद्रशकर शुक्ल) ४५, ४६,
गृहणी, मार्च १६४८ (शातिदेवी, शारदादेवी शर्मा) १३, १४,
जीवन प्रभात (प्रभुदास गाधी) ७,
दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह का इतिहास (गाधीजी) २०
बापू मेरी मा (मनुबहन गाधी) २२, ५२,

वापू ग्रौर [illegible] की अन्तिम झाकी (मनुवहन गाधी) २५
[illegible] सन्देश (परशुराम मेहरोत्रा) २४
वापू की कारावास-कहानी (डा० सुशीला नैयर) २६, ३३,
वापू की झाकिया (काका कालेलकर) २३,
वापू की विराट वत्सलता (काशिनाथ त्रिवेदी) ४२, ४८,
विहार की कौमी ग्राग मे (मनुवहन गाधी) ४७,
मनोरजन, मार्च १९४८ (इन्द्र विद्यावाचस्पति) १२,
महात्मा गाधी दि जर्नलिस्ट (कृष्णदास) ३९,
महात्मा गाधी पूर्णाहुति (प्यारेलाल) ३७,
महादेवभाई की डायरी भाग १ (महादेव देसाई) ९, १९, ५८, ५९, ६०, ६१, ६५,
महादेवभाई की डायरी भाग २ (महादेव देसाई) १६
महादेवभाई की डायरी भाग ३ (महादेव देसाई) १७, ६२, ६३
मील के पत्थर (रामवृक्ष वेनीपुरी) ४९,
मेरे हृदयदेव (हरिभाऊ उपाध्याय) ३२
विश्वज्योति, ग्रप्रैल १९६९ (पी० जे० रामन) ४३
विश्व-वाणी (जी० रामचद्रन) ८, ६४
विश्व-वाणी (सुन्दरलाल) ११,
हरिजन सेवक (१९३४) चद्रशकर शुक्ल, मीरावेन ३, ४,
हरिजन सेवक (१९३५) १८, ५०, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७,